प्रारम्भिक मनोविज्ञान

एस० एम० मोहसिन
अध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग
पटना विश्वविद्यालय

लोकभारती प्रकाशन
१५ ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद १

प्रारम्भिक मनोविज्ञान

एस० एम० मोहसिन
अध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग
पटना विश्वविद्यालय

लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद १

लोकभारती प्रकाशन
१५ ए महात्मा गांधी मार्ग
इलाहाबाद १ द्वारा प्रकाशित





प्रथम संस्करण, १९६७



सुपरफ़ाइन प्रिंटर्स,
२-सी बाई का बाग, इलाहाबाद ३
द्वारा मुद्रित

मूल्य ५ ५०

इस पुस्तक के विषय में

हिन्दी में प्रारम्भिक मनोविज्ञान की पुस्तकों की कमी नहीं है। इनमें से कुछ किताबों में मुख्य विषय-वस्तु का अच्छा समावेश भी है। लेकिन ऐसी किताबें बहुत कम हैं जिनके पन्ने पर ऐसा लगे कि लेखक ने प्रामाणिक पुस्तकों को विचारपूर्वक पढ़ा है, उनका मनन किया है और अपने अध्ययन और मनन के फलस्वरूप मनोवैज्ञानिक विषयों का जो सुसम्बद्ध ज्ञान उसे हुआ है उसे उसने अपनी पुस्तक में व्यक्त किया है। केवल इसी एक कारण से हिन्दी में ऐसी बहुत कम किताबें हैं जो अमरीकी और अंग्रेज लेखकों की किताबों की तुलना में बराबर आ सकें। पढ़ाई और परीक्षा का माध्यम अब मातृभाषायें हो गई हैं और अब अमेरिकनों और अंग्रेजों द्वारा लिखी अंग्रेजी किताबों की उपयोगिता धीरे-धीरे घटती जा रही है। ऐसी आशा की जाती थी कि पढ़ाई और परीक्षण के माध्यम के बदलने से विद्यार्थी अपनी पाठ्य पुस्तकों के विचार वस्तु को पहले से ज्यादा व्यापक और गहन ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। लेकिन खेद की बात है कि ऐसा नहीं हो रहा है बल्कि विद्यार्थियों के ज्ञानार्जन का स्तर हर तरह से नीचे गिर रहा है। आज का सामान्य विद्यार्थी जो कुछ पढ़ता है उसे न तो ठीक से समझता है और न उसे अपने पूर्व अर्जित ज्ञान के साथ समन्वित कर पाता है। वह किसी तरह से इम्तहान तो पास कर लेता है लेकिन अपनी जानकारी को किसी अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति में उपयोग नहीं कर पाता है।

प्रारम्भिक मनोविज्ञान सामान्य मनोविज्ञान का परिचय कराने-वाली पुस्तक है। इसका मुख्य उद्देश्य है कि इसका पाठक आधुनिक

लोकभारती प्रकाशन
१५ ए महात्मा गांधी मार्ग
इलाहाबाद १ द्वारा प्रकाशित

●

कापीराइट
एम० एम० मोहसिन

●

प्रथम संस्करण, १९६७

●

सुपरफाइन प्रिंटर्स,
१-सी बाई का बाग, इलाहाबाद ३
द्वारा मुद्रित

मूल्य ५.५०

इस पुस्तक के विषय में

हिन्दी में प्रारम्भिक मनोविज्ञान की पुस्तकों की कमी नहीं है। इनमें से कुछ किताबों में मुख्य विषय-वस्तु का अच्छा समावेश भी है। लेकिन ऐसी किताबें बहुत कम हैं जिनके पढ़ने पर ऐसा लगे कि लेखक ने प्रामाणिक पुस्तकों को विचारपूर्वक पढ़ा है, उनका मनन किया है और अपने अध्ययन और मनन के फलस्वरूप मनोवैज्ञानिक विषयों का जो सुसम्बद्ध ज्ञान उसे हुआ है उसे उसने अपनी पुस्तक में व्यक्त किया है। केवल इसी एक कारण से हिन्दी में ऐसी बहुत कम किताबें हैं जो अमरीकी और अंग्रेज लेखकों की किताबों की तुलना में बराबर आ सकें। पढ़ाई और परीक्षा का माध्यम अब मातृभाषायें हो गई हैं और अब अमेरिकनों और अंग्रेजों द्वारा लिखी अंग्रेजी किताबों की उपयोगिता धीरे-धीरे घटती जा रही है। ऐसी आशा की जाती थी कि पढ़ाई और परीक्षण के माध्यम के बदलने से विद्यार्थी अपनी पाठ्य पुस्तकों के विचार-वस्तु को पढ़ने से ज्यादा व्यापक और गहरा ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। लेकिन खेद की बात है कि ऐसा नहीं हो रहा है बल्कि विद्यार्थियों के ज्ञानार्जन का स्तर हर तरफ से नीचे गिर रहा है। आज का सामान्य विद्यार्थी जो कुछ पढ़ता है उसे न तो ठीक से समझता है और न उसे अपने पूर्व अर्जित ज्ञान के साथ समन्वित कर पाता है। वह किसी तरह से इम्तहान तो पास कर लेता है लेकिन अपनी जानकारी का किसी अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति में उपयोग नहीं कर पाता है।

प्रारम्भिक मनोविज्ञान सामान्य मनोविज्ञान का परिचय करानेवाली पुस्तक है। इसका मुख्य उद्देश्य है कि इसका पाठक [illegible]

मनोविज्ञान के मूलभूत तथ्यों और प्रत्ययों को इतनी अच्छी तरह समझ लें कि उसके बौद्धिक जीवन रूपी भवन में एक ऐसी नींव पड़ जाये जिस पर उच्चतर स्तर की पुस्तकों को पढ़ने से सतत विस्तृत होनेवाली जानकारी और सूझ-बूझ की इमारत खड़ी हो सकें। लेखक ने ऐसी लेखन-शैली के प्रयोग का प्रयत्न किया है जिसमें बिना सोचे-समझे रटने की प्रवृत्ति को, तोता रटन को जिसमें स्कूल और कॉलेज के विद्यार्थियों की बौद्धिक शक्तियाँ सूख जाती हैं और जिसके कारण वे शक्तियाँ पनप नहीं पातीं, प्रश्रय नहीं मिले। किसी भी नये प्रत्यय का उपयोग करने के पहले लेखक ने पाठक को इतनी सामग्री दे दी है जिससे वह उस नये प्रत्यय को समझ सके और स्वीकार कर सके। इस पुस्तक को लिखने में लेखक का एक उद्देश्य यह भी रहा है कि पुस्तक ऐसी हो जो आगे लिखी जानेवाली प्रारम्भिक मनोविज्ञान की पुस्तकों के लेखकों के लिये एक 'मॉडल' का काम कर सके। लेकिन लेखक इस प्रयत्न में कहाँ तक सफल हो सका है इसका निर्णय तो मनोविज्ञान के विज्ञ आलोचक ही कर सकते हैं।

भाषा की सरलता और अभिव्यक्ति की स्पष्टता के अतिरिक्त इस पुस्तक की अन्य विशेषतायें ये हैं —मनुष्य के व्यवहार के आधुनिक ज्ञान का केन्द्र सीखने की क्रिया, प्रेरणा और व्यक्तित्व संबंधी ज्ञान है। लेकिन खेद की बात है कि अपने देश में बी० ए० या बी० एस-सी० का औसत विद्यार्थी इनके संबंध में बहुत अधिक नहीं जान पाता है। 'सीखने' के संबंध में उसे चूहों, बिल्लियों, कुत्तों और बन्दरों के व्यवहार के संबंध की आकस्मिक या अनियमित निरीक्षण के आधार पर एकत्रित कुछ जानकारी ही उपलब्ध हो पाती है। उसके अपने या अपने साथियों के जीवन और व्यवहार से इन 'वैज्ञानिक' तथ्यों का कुछ संबंध है यह वह नहीं समझ पाता है। 'प्रेरणा' की विवेचना इससे आगे नहीं जा पाती कि लोगों की इच्छायें और आकांक्षायें होती हैं, लोगों के प्रेरकों में द्वन्द होता है इस

बात को आमतौर पर एक दो उदाहरण देकर छोड़ दिया जाता है—जैसे, आप घर में रहकर पढ़ना भी चाहते हैं और सिनेमा भी देखना चाहते हैं, लेकिन एक ही समय दोनों काम नहीं कर सकते हैं, वगैरह-वगैरह। 'व्यक्तित्व' उसके लिये एक रहस्य ही बना रहता है—उसके लिये अन्तर्मुखता और 'बहिर्मुखता' ऐसे जादुई शब्द बन जाते हैं जिनमें वह सामाजिक अवधा के तिलिस्म का जानने की कोशिश करने लगता है। इस किताब में ऐसी कोशिश की गई है कि सीखने की क्रिया का विवेचन पाठकों को अपने जीवन और प्रयत्नों से सम्बन्ध दीखे और वे अपने अनुभवों और दुनिया की अपनी जानकारी और अपने किताबी जानकारी का समन्वय कर सकें। 'प्रेरणा' और 'व्यक्तित्व' के अध्याय में लेखक ने सामाजिक व्यवहार तथा मनोविकृतियों सम्बन्धी अपने ज्ञान का काफी उपयोग किया है क्योंकि सामाजिक व्यवहार और मनोविकृतियों सम्बन्धी ज्ञान के बिना उन कारणों को समझा ही नहीं जा सकता है जो लोगों के व्यवहारों के पीछे काम करते रहते हैं।

सामान्य मनोविज्ञान की बहुत कम किताबें 'सांख्यिकी' के मौलिक प्रत्ययों को अपने पाठकों के लिये बोधगम्य बना पाती हैं। कभी-कभी सांख्य की गणना की विधियों के संबंध में एक अध्याय दे दिया जाता है जिसका बाकी दूसरे अध्यायों से कोई संबंध नहीं रहता है, यहां तक कि वह शून्य में लटका जान पड़ता है। इस किताब में सांख्यिकी के प्रत्ययों को 'बुद्धि' के संदर्भ में रखकर इस तरह से समझाने की कोशिश की गई है। पाठक मनोविज्ञान में सांख्याशास्त्र के स्थान को समझ जायें। 'बुद्धि और क्षमतायें' के अध्याय में पाठकों को इतनी जानकारी देने की कोशिश की गई है कि वे आगे चलकर मनोवैज्ञानिक टेस्टों को बनाने की विधियों के उच्चतर और जटिलतर विवेचन को समझ पायें।

सामान्यरूप से शिक्षित पाठक के लिये भी इस पुस्तक में कई काम की चीजें हैं। अपने विषय की प्रारंभिक पुस्तक होने के कारण लेखक कहीं

भी यह मानकर नहीं चला हूं कि पाठक को मनोविज्ञान की पहले से कुछ भी जानकारी है। अतः बिना किसी मनोवैज्ञानिक ज्ञान के भी इस पुस्तक को समझा जा सकता है। परिचित परिस्थितियों और घटनाओं का बार बार उपयोग किया गया है और इस तरह पाठकों की दिलचस्पी बराबर बनी रहेगी, इसकी काफी संभावना है। साथ ही, इस विधि से पाठकों को मनुष्यों के व्यवहार की गति को निर्धारित करनेवाली धाराओं, विपरीत धाराओं, और छिपी हुई धाराओं को समझने में सहूलियत होगी।

मैं अपने सहकर्मियों के प्रति कृतज्ञ हूं जिन्होंने मुझे इस पुस्तक को लिखने के लिये बराबर प्रोत्साहन दिया है। मैं अपने आदरणीय सहकर्मी डा० कृष्णकुमार जमुआर का विशेष रूप से कृतज्ञ हूं जिनके सहयोग के बिना यह पुस्तक संभवतः हिन्दी में प्रकाशित नहीं हो पाती। मैं रामचन्द्र प्रसाद को भी धन्यवाद करता हूं जिन्होंने प्रेस में जाने के पहले पुस्तक की पाण्डुलिपि को एक नजर देखा।

मनोविज्ञान विभाग — स० मु० मोहसिन
पटना विश्वविद्यालय

अनुक्रम

१

मनोविज्ञान की विषय-वस्तु तथा परिभाषा

Subject matter of Psychology and Definition

मनोविज्ञान मनुष्य के स्वभाव, उसके ज्ञान और काय करने की विधियों का अध्ययन है।

मनुष्य कई वस्तुओं के बीच रहता है। इनमें कुछ वस्तुएँ उसके लिए लाभप्रद हैं और कुछ हानिकारक भी। अत उसे यह जानना चाहिए कि कौन कौन सी वस्तुएँ उसके लिए लाभदायक हैं और कौन-कौन सी वस्तुएँ हानिकारक हैं। इन वस्तुओं से लाभ उठाने के लिए उसे कुछ काय करना पड़ता है। इसी तरह हानिकारक वस्तुओं से बचने के लिए भी वह काय करता है। मनुष्य में वस्तुओं को समझने की और उनके प्रति अपने ज्ञान के अनुसार काय करने की क्षमता है।

मनुष्य कई व्यक्तियों के बीच भी रहता है। बचपन में इन्हीं में से कुछ व्यक्ति उसे विभिन्न वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करने में सहायता देते हैं। वे इन्हें इन वस्तुओं के प्रति काय करने की भी शिक्षा देते हैं। वातावरण की विभिन्न वस्तुओं के सदुपयोग के लिए मनुष्य अन्य व्यक्तियों के साथ काय करता है। इसी प्रकार वातावरण की विभिन्न हानिकारक वस्तुओं से बचने के लिए भी वह अन्य व्यक्तियों के साथ काय करता है। वह सभी व्यक्तियों को सहायक नहीं पाता है। इनमें से कुछ लोग उसे हानि भी पहुँचाते हैं। वह ऐसे लोगों से बचता है। कभी-कभी उसे कुछ ऐसे काय भी करने की आवश्यकता होती है जिससे वह हानि पहुँचाने वाले व्यक्तियों से अपने को बचा सके। अत मनुष्य के लिए यह जानना आवश्यक हो जाता है कि कैसे लोग उसके सहायक होंगे और कैसे लोग उसे हानि पहुँचाएँगे

तथा अपने ज्ञान के अनुसार इन व्यक्तियों के प्रति कैसे व्यवहार करना चाहिए यह भी उसे सीखने की जरूरत होती है।

मनुष्य के स्वभाव को समझने के लिए हम यह समझना चाहिए कि मनुष्य वस्तुओं और व्यक्तियों को किस तरह जानता है। हम लोगों को यह भी समझना चाहिए कि वह किस तरह इन वस्तुओं के प्रति काय करता है, किस तरह अन्य व्यक्तियों के साथ रहता है और उनके साथ किस तरह का व्यवहार करता है। मनुष्य के जानने और काय करने के तरीके जन्म के समय और बडे होने पर एक ही प्रकार के नहीं होते। जैसे-जैसे उसकी आयु बढ़ती है उसका वस्तु तथा व्यक्ति सम्बन्धी ज्ञान एव उनके प्रति काय तथा व्यवहार करने के तरीके विशेष रूप से परिवर्तित होते हैं। उसके ज्ञान और व्यवहार में अधिकतर परिवतन सीखने के कारण होते हैं। मनुष्य वस्तुओं तथा व्यक्तियों को समझने के नए तरीके सीखता है। उसका ज्ञान क्रमश और भी जटिल बन जाता है। मनुष्य काय एव व्यवहार के भी नए तरीकों को सीखता है। ये भी क्रमश जटिल होते जाते हैं। अत मनुष्य के स्वभाव को समझने के लिए हम लोगों को अब यह समझना है कि उसने सीखने के कौन-कौन से तरीके हैं, किस प्रकार उसके ज्ञान तथा व्यवहार का विकास और परिवर्तन होता है।

मनुष्य के ज्ञान के कई तरीके हैं। जो वस्तुएँ तथा जो व्यक्ति अभी यहाँ पर हैं उनकी जानकारी उसे प्रत्यक्षीकरण द्वारा होती है। उसे स्मरण द्वारा उन वस्तुओं और उन व्यक्तियों का भी ज्ञान होता है जो अभी यहाँ पर नहीं हैं। इनका उसे पहले कभी प्रत्यक्षीकरण हुआ था। मनुष्य कल्पना द्वारा ऐसे वस्तुओं और व्यक्तियों का भी ज्ञान प्राप्त कर सकता है जिनका उसे कभी प्रत्यक्षीकरण नहीं हुआ है। कोई भी व्यक्ति किसी ऐसे देश की वस्तुओं और व्यक्तियों की कल्पना कर सकता है जिसे उसने कभी भी नहीं देखा है।

मनुष्य वस्तुओं तथा व्यक्तियों के सम्बन्ध में केवल जानता ही नहीं है। वह कुछ वस्तुओं को प्राप्त करने तथा कुछ व्यक्तियों के

साथ रहने की भी इच्छा रखता है। जब उसकी इच्छाएँ पूरी होती हैं तो वह सन्तुष्ट होता है और जब उसकी इच्छाएँ पूरी नहीं होती हैं तब उसे असन्तोष होता है। जब वह कोई कार्य करता है तो अपने कार्यों में भी वह कभी खुश होता है और कभी नाखुश। कभी मनुष्य शान्ति के साथ करता है। कभी उसे क्रोध या भय भी होता है। मनुष्य दूसरे व्यक्तियों के साथ केवल रहता ही नहीं है। वह कुछ लोगों को प्यार और कुछ का आदर भी करता है। वह बार-बार उनकी मदद करने के लिए अथवा उनकी आज्ञा का पालन करने के लिए तत्पर रहता है। कुछ व्यक्तियों को वह नापसन्द करता है, कुछ से वह घृणा भी करता है। इनकी न तो वह मदद ही करता है और न इनसे उसको सहानुभूति ही होती है।

मनोविज्ञान के अन्तर्गत हम लोग यह समझने की कोशिश करते हैं कि मनुष्य को वस्तुओं तथा व्यक्तियों का प्रत्यक्षीकरण किस प्रकार होता है, वह उन्हें कैसे स्मरण रखता है और कैसे भूल जाता है, वह कैसे उन वस्तुओं और व्यक्तियों की कल्पना करता है जिन्हें उसने पहले कभी नहीं जाना है, वह कैसे वस्तुओं और व्यक्तियों के बारे गुणों के सम्बन्ध में सोचता है। हमलोग यह भी जानने की कोशिश करते हैं कि कैसे मनुष्य को सुख होता है और कैसे दुःख, कैसे क्रोध और भय का संवेग होता है, कैसे उसमें किसी एक के लिए प्रेम और किसी दूसरे के लिए घृणा का विकास होता है। हमलोग यह भी समझने की कोशिश करते हैं कि कैसे वह एक प्रकार का कार्य करना स्वीकार करता है और दूसरे प्रकार के कार्यों का बहिष्कार करता है, किस प्रकार वह निर्णय करता है और कैसे वह वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति वास्तव में कार्य करता है। किसी भी प्रौढ़ व्यक्ति के इन सभी क्रियाओं को समझने के लिए हम यह समझने की कोशिश करते हैं कि इन क्रियाओं का शिक्षण एवं विकास कैसे होता है।

मनुष्य के कार्यों का सामूहिक नाम 'व्यवहार' रखा गया है। मनुष्य के स्वभाव को समझने के लिए मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है। यह अध्ययन नियमानुसार होता है। यह तथ्यों के संग्रह पर

आधारित रहता है। तथ्यों का संग्रह एक निर्धारित योजना तथा पद्धति द्वारा किया जाता है। इन तथ्यों से निष्कर्ष तक के नियमों के अनुसार निकाले जाते हैं। विश्वसनीय तथा सही विधि द्वारा तथ्यों का नियमित अध्ययन वैज्ञानिक अध्ययन कहलाता है। अतः मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान कहा जा सकता है।

मनुष्य के स्वभाव को समझने के लिए हम लोगों को नियमित रूप से उसके कार्यों और व्यवहारों को देखना होता है। एक व्यक्ति के लिए दूसरे व्यक्ति के व्यवहार को देखना सम्भव है। किन्तु मनुष्य की सभी क्रियाएँ नहीं देखी जा सकती हैं। कुछ क्रियाएँ केवल उसी व्यक्ति द्वारा देखी जा सकती हैं जिसकी वे क्रियाएं हैं और किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा नहीं। इसी प्रकार की क्रियाएं प्रत्यक्षज्ञान स्मरण कल्पना, विचार इच्छा, निर्णय, रुचि भाव सुख और दुःख ईर्षा, स्नेह, भय आदि हैं। ये क्रियाएँ दौड़ना मारना, पकड़ना उठाना बोलना लिखना, चलना आदि से भिन्न हैं। जिनके ये काम हैं उनके अतिरिक्त दूसरे व्यक्ति भी इनका निरीक्षण करते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ और भी क्रियाएं हैं जैसे साँस की गति हृदय की गति रक्त की दौड़ान आदि जिनका निरीक्षण दूसरे व्यक्ति भी किसी यन्त्र की सहायता से कर सकते हैं।

कुछ मनोवैज्ञानिक उन व्यवहारों का वर्णन जिनका निरीक्षण दूसरे व्यक्ति नहीं कर सकते हैं अनुभव शब्द द्वारा करते हैं। वे "व्यवहार" शब्द का प्रयोग उस प्रकार की क्रियाओं के लिए करते हैं जो दूसरे व्यक्ति द्वारा भी देखी जा सकती हैं। जिन क्रियाओं को दूसरे व्यक्ति नहीं देख सकते उन्हें मानसिक प्रक्रियाएं कहा जाता है। जिन क्रियाओं को दूसरे व्यक्ति देख सकते हैं वे शारीरिक क्रियाएँ कहलाती हैं। मनोविज्ञान समस्याओं तथा व्यक्तियों से सम्बन्धित मनुष्य के सभी क्रियाओं का (शारीरिक एवं मानसिक) एक नियमित अध्ययन है।

मनोविज्ञान के अन्तर्गत हम मानव स्वभाव को समझने की कोशिश करते हैं। इसके लिए हमें केवल यह नहीं जानना है कि मनुष्य की कौन

कौन सी क्रियाएँ ह तथा उसके अनुभव और व्यवहार के कौन-कौन से तरीके हैं। हमलोगों को यह भी जानना चाहिए कि क्यों मनुष्य कभी एक तरह का कभी दूसरे तरह का व्यवहार करते ह क्या वे एक तरह का या दूसरे तरह का अनुभव करते हैं? मनोविज्ञान एक विज्ञान ह। एक विज्ञान केवल अपने तथ्यों का वर्णन ही नही करता ह वह उनकी व्याख्या भी करता ह। मनोविज्ञान मनुष्य की क्रियाओं, उसके अनुभव एवं व्यवहार का वर्णन एवं व्याख्या करता ह। अत मनोविज्ञान की परिभाषा हम व्यवहार का विज्ञान के रूप में द सकते हैं क्योंकि हम मनुष्य के मानसिक प्रक्रियाओं को उसके व्यवहार को देखकर ही समझते ह।

मनोविज्ञान की विधियाँ (Methods of Psychology)

मनोविज्ञान के अन्तगत मनुष्य के व्यवहार का नियमित वर्णन और व्याख्या किया जाता है। किन्तु हम लोग किसी वस्तु या घटना का वर्णन तब तक नहीं कर सकते हैं जब तक हमने उसका निरीक्षण नहीं किया है। मनुष्य के व्यवहार का वर्णन करने के लिए हम लोगों का मनुष्य के व्यवहार का निरीक्षण करना आवश्यक ह। अत निरीक्षण को मनोविज्ञान की विधि कहा जाता है। मनुष्य की क्रियाओं का निरीक्षण ही एकमात्र साधन ह जिसके द्वारा हम जान सकते ह कि मनुष्य की कौन कौन सी क्रियाएँ ह किस प्रकार उसका एक काम उसके दूसरे काय से सम्बन्धित ह। निरीक्षण ही एकमात्र साधन ह जिसके द्वारा हम यह पता लगा सकते हैं कि किस तरह की परिस्थिति में किस तरह की क्रिया होती ह। इन सब बातों की जानकारी हमें मनुष्य के व्यवहार की व्याख्या करने में सहायक होती ह। अत मानव व्यवहार का वर्णन करने तथा उसकी व्याख्या करने के लिए मनोविज्ञान निरीक्षण विधि (Observation-method) का उपयोग करता ह।

एक मनोवैज्ञानिक मनुष्य के सभी कार्यों का निरीक्षण नहीं कर सकता ह। वह केवल उन्ही व्यवहारों का निरीक्षण कर सकता ह जिनका

निरीक्षण दूसरे व्यक्ति भी कर सकते है। उदाहरणार्थ, जब एक व्यक्ति किसी वस्तु या किसी दूसरे व्यक्ति के प्रति व्यवहार करता है तब आप देख सकते है कि वह उस वस्तु या व्यक्ति की ओर बढ़ रहा है। चलने की क्रिया में उसके हाथ और पैर आगे और पीछे की ओर बढ़ते है। जो व्यक्ति चल रहा है वह भी यदि ध्यान दे तो इन क्रियाओं को देख सकता है। किन्तु उसी समय और भी बहुत सी दूसरी क्रियाएँ उस व्यक्ति में हो रही है। इन्हें हमने पहले मानसिक प्रक्रियाएँ बतलाया है। इन क्रियाओं का निरीक्षण केवल वह व्यक्ति स्वय कर सकता है। दूसरा कोई भी व्यक्ति उनका निरीक्षण नही कर सकता। उदाहरणार्थ आप यह नहीं जान सकते है कि वह व्यक्ति क्या किसी वस्तु या किसी व्यक्ति की ओर बढ़ रहा है। क्या उसे आश्चर्य हो रहा है कि वह कौन सी वस्तु है या कौन आदमी है? या क्या वह उस वस्तु को प्राप्त करना चाहता है या उस व्यक्ति से मिलना चाहता है? आप यह नहीं जान सकते है कि उस वस्तु या व्यक्ति के प्रति उसके मन में कौन सा भाव है और वह उनसे क्या करना चाहता है। इनके सम्बन्ध में केवल वही व्यक्ति सच्ची बातें बता सकता है और तब आप उन्हें जान सकते है। केवल वही इनका निरीक्षण कर सकता है और इस तरह उन्हें जान सकता है।

जब मनोवैज्ञानिक दूसरे व्यक्ति के व्यवहार का निरीक्षण करते है तब यह निरीक्षण वस्तुनिष्ठ निरीक्षण (Objective observation) कहलाता है। जब एक व्यक्ति क्रोधित है तब आप ऐसे ही देख सकते है कि उसका चेहरा लाल है उसकी आँखें खुली है उसके होठ फड़क रहे है वह चिल्ला या गरज रहा है। उसके शारीरिक क्रियाओं को देखकर आप इस निष्कर्ष पर आते है कि वह क्रोधित है। जब एक आदमी चुपचाप बैठा है तब ऐसी कम ही बातें रहती है जिनका आप निरीक्षण कर सकते है। आप उसके सम्बन्ध में बहुत ही कम बातें जान सकेंगे। किन्तु हो सकता है कि वह व्यक्ति किसी कठिन मानसिक कार्य में लगा हो, वह किसी कहानी का प्लाट सोच रहा हो ... ने की कोशिश कर

रहा हो, वह उनकी तुलना अपनी सोची हुई नई कहानी की प्लाट से कर रहा हो वह कहानी लिखने म इनात्मक का अनुभव कर रहा हो। जब आप उससे पूछते ह कि वह क्या कर रहा था तब वह आपको ये सभी बातें बतला देता ह। जो वणन वह आपको देता ह व उसको मानसिक प्रक्रियाओ के स्वनिरीक्षण पर आधारित हैं। जो निरीक्षण व्यक्ति अपनी मानसिक प्रक्रियाओ का स्वय करता ह वह अन्तर्निरीक्षण या स्वत निरीक्षण (Introspection or Self-observation) कहलाता ह। अत अन्तर्निरीक्षण बाह्य निरीक्षण से भिन्न ह। मनोवैज्ञानिक दूसरे व्यक्ति की मानसिक प्रक्रियाओ के सम्बन्ध में तब जानता ह जब दूसरा व्यक्ति उनके सम्बन्ध में उसे स्वय बताता ह। वह व्यक्ति अपनी मानसिक प्रक्रियाओ का वणन अपने अन्तर्निरीक्षण या स्वत निरीक्षण स कर पाता ह। वह दूसरे मनोवैज्ञानिक बाह्य निरीक्षण विधि का उपयोग करता ह। वह दूसरे व्यक्ति को अपने विचार भाव, इच्छाएँ आदि उसे बतलाने के लिए प्रोत्साहित करता ह। ऐसा करने क लिए दूसरा व्यक्ति अन्तर्निरीक्षण का उपयोग करता ह।

अन्तर्निरीक्षण स्वत निरीक्षण ह किन्तु सभी स्वत निरीक्षण अन्त निरीक्षण नहीं ह। अन्तर्निरीक्षण उस प्रकार का निरीक्षण हैं जिसमें व्यक्ति अपनी मानसिक क्रियाओ का निरीक्षण करता ह। एक व्यक्ति अपना ललाट छू सकता ह और इसे गम पा सकता ह। वह अपनी नाडी की गति गिन सकता ह और यह समझ सकता ह कि यह तेज चल रही ह। वह अपनी सास की गति देख सकता ह और किसी दौड के बाद उसे तेज चलते हुए पा सकता ह। इन सभी दशाओ में वह स्वय निरीक्षण कर रहा ह। किन्तु यह निरीक्षण अन्तर्निरीक्षण नहीं ह। यह बाह्य निरीक्षण ह। वही व्यक्ति अपने सिर में भारीपन अनुभव कर सकता ह। वह सोच सकता ह कि उसे ज्वर ह। उसे चिन्ता हो सकती ह कि वह बीमार पडने जा रहा ह। जब वह अपने इन विचारो और भावनाओ का निरीक्षण करता ह तब उसका निरीक्षण स्वत निरीक्षण ह। यही स्वत निरीक्षण

अन्तर्निरीक्षण है। अन्तर्निरीक्षण अपनी मानसिक प्रक्रियाओं का स्वतः निरीक्षण है।

बाह्य निरीक्षण तथा अन्तर्निरीक्षण मनोविज्ञान की दो विधियाँ मानी जाती थीं। यह सच है कि मनोविज्ञान में हम लोग मनुष्य की सभी—शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार की—क्रियाओं का अध्ययन करते हैं। इसलिए बाह्य निरीक्षण तथा अन्तर्निरीक्षण दोनों का उपयोग आवश्यक है। किन्तु मनोवैज्ञानिक केवल बाह्य निरीक्षण का उपयोग करता है। दूसरे लोग उसे अपने अन्तर्निरीक्षण का वर्णन देते हैं। वे मनोवैज्ञानिक को अपनी भावनाओं, प्रत्यक्षीकरण, स्मृतियों, विचार, इच्छाएँ, निर्णय आदि के सम्बन्ध में अन्तर्निरीक्षण द्वारा जानकर बतलाते हैं। फिर भी मनोवैज्ञानिक को अन्तर्निरीक्षण द्वारा जो वर्णन मिलते हैं उनके उपयोग में सावधान रहना पड़ता है। अन्तर्निरीक्षण कठिन है। एक ही व्यक्ति मानसिक क्रिया में लगा रहता है और स्वयं उसका निरीक्षण भी करता है। वह विचार करता है और विचार की क्रिया का निरीक्षण भी। अन्तर्निरीक्षण से उसकी मानसिक क्रिया बीच में ही रुक जा सकती है। एक व्यक्ति किसी समस्या को हल करने में लगा हो सकता है। उस समय उसमें कई तरह की प्रक्रियाएँ हो सकती हैं। उस समस्या के कारण उसे उसी तरह की दूसरी समस्याओं के बारे में विचार करना पड़ सकता है। वह याद कर सकता है कि किस तरह उसने उस तरह की दूसरी समस्याओं को हल किया था। जितने भी हल के उपाय उसके विचार में आ सकते हैं वह उन सब की तुलना कर सकता है। वह किसी सन्तोषजनक हल पर पहुँचने की आशा कर सकता है। वह यह भी अनुभव कर सकता है कि समस्या का हल उसके वश से परे है। इससे वह चिन्तित हो सकता है। यदि उसी व्यक्ति को इन सभी क्रियाओं का वर्णन करने को कहा जाय तो समस्या के हल का कार्य समाप्त हो जा सकता है। समस्या हल करने की कोशिश की अपेक्षा वह समस्या हल करने में होने वाली मानसिक प्रक्रियाओं का निरीक्षण आरम्भ कर देता है।

यद्यपि मनोवैज्ञानिक अपने अध्ययन के लिए बहुत सी बातें अन्तर्निरीक्षण द्वारा प्राप्त करता है फिर भी अधिकांश तथ्यों के लिये उसे मुख्य रूप से बाह्य निरीक्षण पर ही निर्भर करना पड़ता है। बच्चे पागल तथा पशु अन्तर्निरीक्षण नहीं कर सकते। वे अपनी मानसिक क्रियाओं का निरीक्षण कर मनोवैज्ञानिक को नहीं बतला सकते हैं। मनोवैज्ञानिक उनके शारीरिक व्यवहारों का निरीक्षण करता है। वह शारीरिक व्यवहारों का अर्थ निकालता है। शारीरिक व्यवहार उनके साथ होने वाली मानसिक क्रियाओं पर प्रकाश डालते हैं। एक चार साल के बच्चे को जिसने अक्षरों को सीखा है, अक्षरों को दोहराने के लिए कहा जा सकता है। बच्चा कुछ को बगैर किसी झिझक के दोहराता है। कुछ को रुक कर दोहराता है। कुछ को दोहराने में असमर्थ रहता है। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बच्चा कुछ अक्षरों को अच्छी तरह याद करता है कुछ के लिए उसका स्मरण कमज़ोर है कुछ को वह भूल गया है। जब कोई अजनबी घर में प्रवेश करता है तब घर का कुत्ता भूकने लगता है। जब घर में रहने वाले लोग अन्दर आते हैं तब वह नहीं भूकता है। हम उसके भूकने के व्यवहार को समझते हैं। कुत्ते को जाने-पहिचाने लोगों का स्मरण है वह उन्हें पहिचान सकता है। एक पागल व्यक्ति से जब हम बातें करते रहते हैं तब हम उसके शब्द असम्बन्धित तथा उसके वाक्यों को अधूरे पाते हैं। हम समझते हैं कि उसके ख्याल उलझे हुए हैं उसके विचार असम्बन्धित हैं।

हमने पहले बतलाया है कि मनोवैज्ञानिक केवल वस्तुनिष्ठ विधि का उपयोग करता है। वह व्यक्तियों के व्यवहारों का निरीक्षण करता है। वह इनके प्रत्यक्षीकरण विचार भाव इच्छाओं आदि के वर्णन का भी निरीक्षण करता है। इन क्रियाओं का वर्णन वे बातचीत द्वारा या लिखकर कर सकते हैं। इन दोनों स्थितियों में मनोवैज्ञानिक इनकी बातों का या लिखावट का निरीक्षण करता है। अतः मनोवैज्ञानिक की विधि बाह्य निरीक्षण है। वह अन्तर्निरीक्षण नहीं करता। ऐसा कहना गलत नहीं

होगा कि अन्तर्निरीक्षण मनोविज्ञान की विधि नहीं है क्योंकि मनोवैज्ञानिक इसका उपयोग नहीं करता है। अन्य एक विज्ञान की तरह मनोविज्ञान केवल बाह्य निरीक्षण विधि का उपयोग करता है। अन्तर्निरीक्षण या स्वतः निरीक्षण केवल एक ऐसी विधि है जिससे व्यक्ति, जिनका अध्ययन-मनोवैज्ञानिक करते हैं अपनी मानसिक प्रक्रियाओं को जान सकता है। बिना अन्तर्निरीक्षण के ये इन प्रक्रियाओं के बारे में मनोवैज्ञानिक को नहीं बता सकते हैं।

प्रयोगविधि (Experimental Method)

हमलोगों ने देखा कि वास्तव में वस्तुनिष्ठ निरीक्षण ही मनोविज्ञान की विधि है। मनोवैज्ञानिक व्यक्तियों के व्यवहार का निरीक्षण करता है। वह यथासम्भव उनके मानसिक क्रियाओं का भी निरीक्षण करता है। ऐसे वर्णन शाब्दिक व्यवहार (Verbal behaviar) कहे जाते हैं क्योंकि इनमें शब्दों का उपयोग बोलकर या लिखकर किया जाता है। मनोवैज्ञानिक व्यवहार का निरीक्षण स्वाभाविक परिस्थितियों में कर सकता है। निरीक्षण की इस विधि को स्वाभाविक स्थिति निरीक्षण (Naturalistic observation) कहा जाता है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति देख सकता है कि जिन बच्चों को सफलता प्राप्त करने पर माता पिता द्वारा पुरस्कार दिए जाते हैं वे अधिक मन लगाकर पढ़ते हैं। वह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि अध्ययन में अच्छे अंक के लिए पुरस्कार मिलने से उन बच्चों में अध्ययन की रुचि बढ़ती है। यह निरीक्षण जिसके आधार पर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है स्वाभाविक स्थिति निरीक्षण कहलाता है। इसमें कोई भी व्यक्ति व्यवहार का निरीक्षण उस समय करता है जब यह व्यवहार स्वाभाविक रूप से होता रहता है। अब हमलोग एक दूसरा उदाहरण लें। कोई व्यक्ति एक बच्चे के व्यवहार का निरीक्षण उसके जन्म से लेकर बारह वर्ष की आयु तक करता है। वह बच्चे के प्रथम शब्द का तथा उसके प्रथम शब्द बोलने की उम्र का रिकार्ड रखता है। इसी तरह

वह यह भी लिखता है कि किस उम्र में बच्चा दूसरा शब्द बोलता है, किस उम्र में वह पहले-पहल वाक्य का उपयोग करता है, किस उम्र में किसी शब्द का उपयोग किसी विशेष भाव के लिए करता है। वह इस प्रकार बच्चे में भाषा विकास का निरीक्षण करता है। यह निरीक्षण स्वाभाविक निरीक्षण है। इसी प्रकार वह कई बच्चों का निरीक्षण कर सकता है और औसत बच्चे के भाषा विकास की अवस्थाओं को निर्धारित कर सकता है। वह अपने इस ज्ञान का उपयोग किसी विशेष बच्चे के भाषा विकास को समझने के लिए कर सकता है। जब एक बच्चा अपनी उम्र के भाषा विकास की अवस्था तक नहीं पहुँचता है तब वह यह निर्णय करता है कि इस बच्चे का भाषा विकास मन्द है। वह समझता है शायद यह लड़का औसत से कम बुद्धि का है। इसके अतिरिक्त दूसरे तरह का निरीक्षण भी होता है। वह प्रयोगात्मक निरीक्षण या प्रयोग कहलाता है। इसमें व्यक्ति के व्यवहार का निरीक्षण उसकी स्वाभाविक अवस्था में नहीं किया जाता है। उस व्यक्ति पर प्रयोग द्वारा ही उसके व्यवहार का निरीक्षण किया जाता है।

प्रयोग में ऐसी परिस्थिति बनाई जाती है जिसमें निरीक्षण किए जाने वाला व्यवहार उत्पन्न हो। उदाहरण के लिए एक मनोवैज्ञानिक प्रयोग के आधार पर पुरस्कार के प्रभाव का निरीक्षण करना चाहता है। मान लें वह बारह वर्ष के बीस लड़के और लड़कियों को इकट्ठा करता है। वह उनका नाम अलग अलग एक ही तरह के कागज के पुर्जों पर लिखता है। वह इन सभी पुर्जों को एक डिब्बे में रखता है और इन्हें अच्छी तरह झकझोर कर मिला देता है। वह इनमें से किसी दो पुर्जे को निकालता है और पहले पर १—लिखता है और दूसरे पर २—फिर वह दो पुर्जे को निकालता है और पहले पर ३ और दूसरे पर ४ लिखता है। इसी तरह वह सभी पुर्जे को निकाल लेता है और उन पर १ से २० तक अंक अंकित कर देता है। इसके बाद वह उन्हें दो हिस्सों में बाँटता है। जिन पर फुट नम्बर १, ३, ५ २६ होते हैं उन्हें एक हिस्से में और जिन पर जोड़े नम्बर

२, ४, ६ ४० होते हैं उन्हें दूसरे में। इस तरह उसने ४० लड़के और लड़कियों के दल को बीस-बीस के दो छोटे दलों में बाँट दिया है। यदि वह यह पाता है कि किसी दल में लड़कों से अधिक लड़कियाँ हैं तब वह उन्हें बराबर कर देता है। मान लें एक दल में आठ लड़कियाँ और दूसरे में बारह हैं। अब वह दूसरे दल से दो लड़कियों को पहले दल में तथा दो लड़कों को पहले दल से दूसरे दल में हटा देता है।

जिस व्यक्ति पर प्रयोग किया जाता है उसे प्रयोज्य (Subject) कहा जाता है। जो प्रयोग करता है वह प्रयोग-कर्ता (Experimentor) कहलाता है। ऊपर के उदाहरण में जिस विधि के आधार पर प्रयोगकर्ता ने प्रयोज्यों को दो दलों में विभाजित किया यह विधि अनायास विधि (Random method) कहलाती है। प्रयोज्यों का इस तरह का चुनाव अनायास चुनाव कहलाता है। अनायास चुनाव में हरेक प्रयोज्य को एक दल या दूसरे दल में रखे जाने की सम्भावना एक समान है। जो उदाहरण हमने दिया है वह प्रयोज्यों के चुनाव की एक बहुत सरल विधि है। मनोवैज्ञानिक प्रयोग में और भी अधिक जटिल चुनाव विधियों का उपयोग किया जा सकता है।

किसी कार्य पर पुरस्कार की प्रयोगात्मक अध्ययन के लिए प्रयोगकर्ता मान लें, २५ शब्दों की एक सूचि तैयार करता है जिसमें प्रत्येक शब्द आठ अक्षरों का है। वह प्रत्येक प्रयोज्य को यह कहता है कि उन्हें बहुत ही सावधानी से उन शब्दों को देखना है क्योंकि उसे उन्हें कण्ठस्थ करना है। एक दल के सभी प्रयोज्यों को वह एक एक कर प्रत्येक कार्ड दिखलाता है। प्रत्येक कार्ड को सेकेन्ड के लिए दिखलाया जाता है। जब सभी कार्ड दिखला दिए जाते हैं तब प्रत्येक प्रयोज्य को एक पुर्जे पर उन शब्दों को लिखना होता है जो उन्हें याद रहते हैं। प्रयोगकर्ता इन पुर्जों को एकत्रित करता है। फिर वह उन्हें शब्दों को एक-एक कर दिखलाता है। इसी तरह वह इस कार्य को कई बार दोहराता है। प्रत्येक बार वह उन पुर्जों को जिन पर प्रयोज्य शब्दों को याद कर लिखते हैं एकत्रित करता है। मान

लें, दस बार के बाद वह प्रयोग बन्द कर देता है। वह देखता है कि एक या अधिक प्रयोज्य ने ५ बार के बाद सभी शब्दों को सही-सही दोहरा लिया है, कुछ ने ऐसा ६ बार के बाद किया है। एक या कुछ अधिक प्रयोज्य दस बार के अन्त में भी सभी शब्दों को सही-सही नहीं दोहरा सके हैं।

यह प्रयोग ठीक उसी तरह दूसरे दल पर भी किया जाता है। किन्तु प्रयोग आरम्भ करने के पहले प्रयोगकर्ता प्रयोज्य से यह कहता है कि उसके पास तीन पुरस्कार हैं जो इस प्रयोग में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान पाने वालों को दिए जायेंगे। यह उसने पहले दल के लोगों को नहीं बतलाया था। अतः पहले दल ने किसी पुरस्कार के लिए कार्य नहीं किया। पहले दल को नियन्त्रित दल (Control group) कहा जाता है। दूसरा दल जिसे पुरस्कार के लिए कार्य करने को कहा गया है वह प्रयोगात्मक दल (Experimental group) कहलाता है। यह ऐसा इसलिए कहलाता है क्योंकि प्रयोग पुरस्कार के प्रभाव का पता लगाने के लिए किया गया है। दूसरे दल पर ठीक पहले दल की तरह से प्रयोग पूरा करने के बाद प्रयोगकर्ता प्रयोग के परिणाम की जांच करता है। वह यह पाता है कि इस दल के सभी प्रयोज्यों ने आठवें बार में सभी शब्दों को सही-सही दोहरा दिया है। कुछ ने तो सभी शब्दों को चौथे बार में ही दोहरा लिया। प्रयोगकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि जब सीखने का कार्य अच्छे ढंग से करने के लिए प्रयोज्यों को पुरस्कार का प्रलोभन दिया गया तब उनका सीखना जल्द हुआ। अच्छे कार्य के लिए पुरस्कार उस कार्य को या किसी कार्य के सीखने को प्रभावित करता है।

प्रयोग का परिणाम अधिक विश्वसनीय होता है। स्वाभाविक स्थिति निरीक्षण या स्वाभाविक निरीक्षण में ऐसा नहीं होता है। प्रयोग में प्रयोगकर्ता अपने प्रयोज्यों के व्यवहारों का निरीक्षण ऐसी परिस्थितियों में करता है जिन्हें वह स्वयं उत्पन्न करता है। वह सभी परिस्थितियों को जानता है और वह यह भी जानता है कि वहाँ पर कोई दूसरी स्थिति नहीं है। ऐसा नियन्त्रण स्वाभाविक निरीक्षण

में सम्भव नहीं है। जब कोई घटना किसी स्वाभाविक परिस्थिति में होती है तब हम यह नहीं जानते कि उस समय अन्य परिस्थितियाँ किस तरह की थीं। एक परिस्थिति के बारे में हम अनजाने रह सकते हैं और उसी परिस्थिति के कारण वह घटना हो सकती है। अतः स्वाभाविक निरीक्षण में हम लोगों से गलती होने की सम्भावना रहती है। ऐसी गलतियों से प्रयोग में बचा जा सकता है। इसके अतिरिक्त किसी एक प्रयोग को कई बार दोहराया भी जा सकता है और यह देखा जा सकता है कि सभी के परिणाम एक समान मिलते हैं या नहीं।

मनोविज्ञान के कुछ प्रयोगों में यन्त्रों की भी आवश्यकता होती है। इनमें से कुछ यन्त्र व्यवहार के उन सूक्ष्म परिवर्तनों को बतलाते हैं जिनका निरीक्षण आसानी से नहीं किया जा सकता है। कुछ दूसरे ऐसे सामान भी हैं जिनका उपयोग प्रयोज्य को किसी प्रयोग के लिए करना पड़ता है। कुछ यन्त्र ऐसे भी बने हैं जो प्रयोज्य के लिए कोई परिस्थिति उत्पन्न करते हैं जिसमें उसे काम करना होता है। किन्तु मनोविज्ञान में कई महत्त्वपूर्ण प्रयोग ऐसे भी किए गए हैं जिनमें किसी कीमती या नाजुक यन्त्र की आवश्यकता नहीं होती है। प्रयोग के लिए यन्त्र विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं है। प्रयोग की विधि अधिक महत्त्वपूर्ण है। हम लोगों ने जिस उदाहरण का वर्णन किया उसमें किसी विशेष यन्त्र की आवश्यकता नहीं है। फिर भी यदि कोई सावधानी से बतलाए गए विधि का पालन करे तो वह बहुमूल्य निष्कर्ष प्राप्त कर सकता है।

यह नहीं समझना चाहिए कि प्रयोग में प्रयोज्य केवल एक काम करता है और प्रयोगकर्ता उसके व्यवहार का निरीक्षण करता है। किसी प्रयोग में प्रयोज्य का काम करते समय होने वाली मानसिक प्रक्रियाओं का निरीक्षण कर उसे प्रयोगकर्ता को बतलाना होता है। प्रयोज्य अन्तर्निरीक्षण का वर्णन देता है। पुरस्कार के प्रभाव वाले प्रयोग में जिसका वर्णन ऊपर किया गया है, प्रयोज्य को अपनी मानसिक प्रक्रियाओं का वर्णन भी करना चाहिए। उदाहरणार्थ कोई व्यक्ति यह कहता है कि एक विशेष शब्द

ने उसे एक अत्यन्त ही प्रिय वस्तु की याद दिलाई। वह उस शब्द को उस वस्तु से सम्बन्ध के कारण याद रख सका। इसी तरह प्रयोगात्मक दल के प्रयोज्य उस समय सकते हैं कि वे मन से पुरस्कार के बारे में जान रहे थे। वे यह भी कह सकते हैं कि इसी कारण उन्होंने उस कार्य पर पूरा ध्यान दिया। यह ज्ञान प्रयागकर्ता के इस निष्कर्ष को कि पुरस्कार का प्रलोभन किसी कार्य को प्रभावित करता है और सीखना सुदृढ़ बना देता है।

स्वाभाविक निरीक्षण को कभी कभी निरीक्षण कहा जाता है, जब प्रयोगात्मक निरीक्षण को प्रयोग कहा जाता है। अतः हम लोग मनोविज्ञान में निरीक्षण और प्रयोग की विधियों की चर्चा करते हैं। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि प्रयोग में निरीक्षण नहीं होता है। प्रयोग भी निरीक्षण की एक विधि है। प्रयोग में प्रयोगकर्ता द्वारा निर्धारित एवं विशेष परिस्थिति में किसी व्यक्ति को कार्य करना पड़ता है। प्रयोगकर्त्ता उस व्यक्ति के व्यवहार का निरीक्षण करता है। और उसे लिखता है। वह कभी-कभी प्रयोज्य का अन्तर्निरीक्षण कर अपनी मानसिक प्रक्रियाओं के बारे में भी बतलाने लगता है। किसी प्रयोग को एक अच्छा प्रयोग बनाने के लिए अन्य कई नियम और कई तरीके भी हैं। ये प्रयोग विधि के एक अंग बन जाते हैं।

मनोविज्ञान के क्षेत्र (Fields of Psychology)

इन दिनों मनोविज्ञान में बहुत प्रगति हुई है। यह विभिन्न परिस्थितियों में होनेवाले मानव व्यवहार के अनेकों प्रकार तथा इनके भिन्न पहलुओं पर विचार करता है। अतः मनोविज्ञान कई शाखाओं में बँट गया है। हमलोग अब मनोविज्ञान की कुछ मुख्य शाखाओं का वर्णन करेंगे।

बाल मनोविज्ञान (Child Psychology)

मनोविज्ञान मानव स्वभाव का अध्ययन करता है। हमलोग मनुष्य के व्यवहार को देखकर मानव स्वभाव को समझ सकते हैं। मनुष्य के

व्यवहार जन्म के समय से प्रायः परिवर्तित होते रहते हैं। मानव व्यवहार को समझने के लिए हमलोग मानव व्यवहार के इस परिवर्तन को समझने की कोशिश करते हैं। मनोविज्ञान की एक विशेष शाखा है जो यह अध्ययन करती है कि बचपन से लेकर युवावस्था तथा वृद्धावस्था तक किस प्रकार मनुष्य का व्यवहार परिवर्तित होता है। मनोविज्ञान के इस क्षेत्र को विकासात्मक मनोविज्ञान कहा जाता है। मनुष्य के व्यवहार में अधिक से त्वरित परिवर्तन उस समय आते हैं जब वह बचपन से युवावस्था की ओर बढ़ता है। अतः बालमनोविज्ञान मुख्यतः बच्चों के व्यवहार का वर्णन तथा व्याख्या करता है। बालमनोविज्ञान हमें बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक विकास के सम्बन्ध में बतलाता है। बच्चे किस प्रकार कार्य करने के नए तरीके सीखते हैं इसका यह वर्णन तथा व्याख्या करता है। यह हमें बतलाता है कि किस प्रकार बच्चों का व्यवहार प्रौढ़ व्यक्तियों से भिन्न है। यह उन सभी तथ्यों पर भी प्रकाश डालता है जो बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं को प्रौढ़ावस्था तक प्रभावित करते हैं।

असामान्य मनोविज्ञान (Abnormal Psychology)

जब हम मानव स्वभाव का अध्ययन करते हैं तब हम यह आशा करते हैं कि हम कुछ एक मानव व्यवहार पाएँगे जो सामान्य रूप में पाए जाते हैं। हम यह स्वभावतः आशा रखते हैं कि मनुष्य एक तरह की परिस्थिति में अधिक या कम मात्रा में एक ही तरह का व्यवहार करता है। किन्तु हम यह देखते हैं कि कुछ लोग साधारणतः उस तरह से नहीं व्यवहार करते हैं जैसे दूसरे करते हैं। प्रायः हम यह आशा करते हैं कि जब किसी व्यक्ति को यह मालूम होता है कि उसके लड़के ने विद्यालय की परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया है तो वह बहुत ज्यादा खुश होता है। किन्तु हमें कोई ऐसा व्यक्ति भी मिल सकता है जिस पर इस तरह की खबर का कोई भी प्रभाव नहीं होता है। इसी तरह हम यह आशा करते हैं कि जब कोई व्यक्ति अपने एकलौते पुत्र के निधन की खबर सुनता

तो वह अत्यन्त ही शोकाकुल हो जायगा। किन्तु कोई व्यक्ति ऐसा भी हो सकता है जो इस खबर से जरा भी न विचले। ऐसे लोगों से प्राय: हमारी मुलाकात मानसिक रोग के अस्पतालों में होती है। इन्हें असामान्य व्यक्ति कहा जाता है। इनका व्यवहार असामान्य व्यवहार कहलाता है। इनके व्यवहार उन व्यवहारों से भिन्न है जिन्हें हम साधारणतः दूसरे व्यक्तियों में पाते हैं। किस आशा होगी कि एक गरीब आदमी फटे कपड़े पहिने हुए अपने को इंगलैण्ड की रानी बतला सकता है? किन्तु मानसिक रोगों के अस्पताल में आप किसी ऐसे असामान्य व्यक्ति को भी देख सकते हैं जो अपने सिर पर रंगीन फीता में सजाकर रानी की तरह शान से टहलता है। वह केवल कहता ही नहीं कि वह रानी है वह विश्वास भी करता है कि वह एक रानी है तथा अस्पताल के डाक्टर तथा दूसरे कर्मचारी उसके दरबारी हैं।

हम लोग असामान्य मनोविज्ञान या मनोविकारिकी (Psychopathology) के अन्तर्गत यह अध्ययन करने की कोशिश करते हैं कि असामान्य व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों से भिन्न व्यवहार क्या करते हैं? असामान्य व्यवहार के कौन-कौन से प्रकार हैं? उनके क्या कारण हैं? किस प्रकार असामान्य व्यवहार को सामान्य व्यवहार में बदला जा सकता है? किस प्रकार एक असामान्य व्यक्ति सामान्य बनाया जा सकता है?

समाज मनोविज्ञान (Social Psychology)

मानव व्यवहार का अध्ययन करते समय हम यह पाते हैं कि जब व्यक्ति अकेले रहता है तो उसके भाव विचार तथा कार्य एक प्रकार के होते हैं। किन्तु जब वह दूसरों के साथ रहता है तब उसके भाव विचार एवं कार्य दूसरे प्रकार के होते हैं। हमारी भेंट ऐसे व्यक्ति से भी हो सकती है जो समाचार पत्रों में मानव जीवन के आदर्शों की व्याख्या करता है पर जब जातीय या धार्मिक दंगे होते हैं तो वही व्यक्ति दंगा करने वालों का दूसरे धर्म या जाति के लोगों की औरतों और बच्चों पर गोली

फलाने के लिए उभारता है। आपको मुलाकात एक ऐसे अनुभवी चिकित्सक से भी हो सकती है जो सभी रोगों के शारीरिक कारणों तथा उनकी चिकित्सा में विश्वास रखता है और जिसने चिकित्सा शास्त्र को उन्नत बनाने के लिए कई महत्त्वपूर्ण अनुसंधान भी किया है। पर आप उसी अनुभवी चिकित्सक को कुछ दिनों से बीमार अपने एकलौते पुत्र के रोग निवारण के लिए किसी ओझा के पास मन्त्रों द्वारा रोग निवारण के लिए जाते देखकर आश्चर्य चकित रह जाते हैं। समाज मनोविज्ञान में हम लोग मनुष्य के ऐसे तथा इसी तरह के अन्य सामाजिक व्यवहारों का अध्ययन करते हैं। जिस समाज में बच्चा बड़ा होता है उस समाज का जो प्रभाव उसकी आदत, विचार धारणाएँ रुचि उद्देश्य एवं ध्येय के विकास पर होता है उनका अध्ययन भी हम समाज मनोविज्ञान में करते हैं। समाज मनोविज्ञान में हम यह भी अध्ययन करते हैं कि किस तरह जनता किसी महत्त्वपूर्ण समस्या पर अपना मत निर्णय करती है? अफवाह कैसे फैलती है? एक दल के लोग दूसरे दल के लोगों से क्या और कैसे युद्ध करते हैं जब कि वे जानते हैं कि ऐसा युद्ध दोनों के लिए हानिकारक है? क्या कुछ लोग नेता बनते हैं और कुछ लोग अनुयायी। समाज मनोविज्ञान में इन प्रश्नों का तथा इसी तरह के अन्य प्रश्नों का उत्तर हम पाते हैं।

तुलनात्मक और पशु मनोविज्ञान
(Comparative and Animal Psychology)

मानव स्वभाव को समझने के लिए हम मनुष्य के व्यवहार का दूसरे प्राणियों के व्यवहारों से तुलना करते हैं। हम जानते हैं कि मनुष्य भी अन्य पशुओं की भाँति एक पशु है। उसके अन्दर भी उसी तरह की बहुत सी प्रेरणाएँ हैं और वह भी उन्हीं से मिलते-जुलते बहुत से कार्य करता है। मनुष्य को भी भोजन, रहने की जगह और आराम की आवश्यकता है। वह भी खाता है खाकर पचाता है और मल मूत्र त्याग करता है।

दूसरे पशु भी विशेष रूप से वे जो जीवन के स्तर पर मनुष्य के सन्निकट हैं वस्तुतः नए कार्य सीखते हैं। उनमें भी प्रत्यक्षीकरण तथा स्मरण की क्रियाओं के सबूत मिलते हैं। यह मनुष्य का व्यवहार किस हद तक पशुओं के व्यवहार से मिलता-जुलता है? किस हद तक मानव व्यवहार पशुओं के व्यवहार से भिन्न है? हम इन प्रश्नों का उत्तर पशुओं के व्यवहारों के नियमित अध्ययन द्वारा ही दे सकते हैं। तुलनात्मक मनोविज्ञान (Comparative Psychology) में ऐसे अध्ययन हुए हैं और उनका वर्णन किया गया है। पशुओं के सवेगात्मक व्यवहार, सामाजिक व्यवहार, उनकी बुद्धि एवं तर्क की योग्यता तथा उनके सीखने की विधि आदि के बारे अध्ययन किए गये हैं।

मनुष्य के सीखने के सम्बन्ध में बहुत सी बातें पशुओं के सीखने पर प्रयोगात्मक अध्ययन द्वारा जानी गई हैं। पशुओं पर प्रयोग करना अधिक सरल है। आप उन्हें जिस स्थिति में चाहें रख सकते हैं। आप अपने प्रयोग की आवश्यकतानुसार उनके साथ कुछ भी कर सकते हैं। उदाहरणार्थ आप उन्हें कितने भी समय के लिए भूखा रख सकते हैं और उनके व्यवहार पर भूख के प्रभाव का निरीक्षण कर सकते हैं। उनके शरीर में सूई द्वारा रसायन देकर आप कोपयुक्त सवेग उत्पन्न कर सकते हैं। कभी आप उनकी खोपड़ी हटा सकते हैं और यह देख सकते हैं कि यदि मस्तिष्क के विभिन्न हिस्सों को बिजली द्वारा उत्तेजित किया जाता है तो उनके शरीर में कौन-कौन सी प्रतिक्रियाएँ होती हैं।

शरीरक्रिया मनोविज्ञान (Physiological Psychology)

मनोविज्ञान मानव व्यवहार का विज्ञान है। मानव व्यवहार में शारीरिक तथा मानसिक क्रियाएँ दोनों सम्मिलित हैं। शारीरिक क्रियाएँ शरीर के विभिन्न हिस्सों में होती हैं। शरीर के विभिन्न हिस्से इन्द्रिय कहलाते हैं। इन इन्द्रियों की बनावट अत्यन्त ही जटिल है। इनके कार्य भी अत्यन्त ही जटिल हैं। प्रत्येक इन्द्रिय के कार्य दूसरे इन्द्रियों के कार्य तथा प्राणी

की समस्त क्रियाओ से सम्बंधित है। शरीर क्रिया विज्ञान इन्द्रियो की बनावट और दूसरे इन्द्रियो के साथ होने वाले कार्यों का तथा सम्पूर्ण प्राणी की क्रियाओ का अध्ययन करता है।

मनुष्य के शारीरिक व्यवहारो को समझने के लिए मानव शरीर के अगो की बनावट तथा उनके कार्यों का जानना आवश्यक है। शरीर क्रिया मनोविज्ञान मनुष्य के शारीरिक क्रियाओ का अध्ययन करता है। जब हम देखते है सुनते है सूघते है या किसी वस्तु को चखते है तो इनमें जो ज्ञानेन्द्रियाँ शामिल है उनकी बनावट तथा कार्यों के बारे में हमें शरीर क्रिया मनोविज्ञान बतलाता है। यह मानव मस्तिष्क तथा उसके विभिन्न हिस्सो की बनावट तथा उनके कार्यों के सम्बन्ध मे बतलाता है। जब हम शरीर तथा उसके विभिन्न हिस्सो का सचालित करते हैं जब हम किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति व्यवहार करते है तो उनमे शामिल होने वाली इन्द्रियो की बनावट तथा उनके कार्यों के सम्बन्ध में हमें शरीर क्रिया मनोविज्ञान बतलाता है। यह उन इन्द्रियो की बनावट और कार्यों के सम्बन्ध मे भी बतलाता है जिनसे पाचन क्रिया साँस की गति रक्त-सचालन आदि होती है। इन सब बातो की जानकारी से हम मानव व्यवहार को अच्छी तरह समझ पाते है।

व्यवहारिक मनोविज्ञान (Applied Psychology)

मानव स्वभाव का जो ज्ञान हम मनोविज्ञान से प्राप्त होता है उसका उपयोग मानव जीवन को तथा जिस वातावरण मे वह रहता है उसे अच्छा और प्रभावशाली बनाने के लिए किया गया है। मानव व्यवहार के जिन नियमो को मनोविज्ञान ने ढूढ़ा है उनका उपयोग मनुष्य मे अच्छे व्यवहार उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। मनोविज्ञान की वह शाखा जो मानव व्यवहार के तथ्यो एव नियमो का उपयोग मानव व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए करती है उसे व्यवहारिक मनोविज्ञान कहा जाता है। हम व्यवहारिक मनोविज्ञान की तीन प्रमुख शाखाओ की चर्चा करेंगे।

चिकित्सा मनोविज्ञान (Clinical Psychology)

कभी-कभी कोई व्यक्ति यह नहीं जान पाता है कि अमुक परिस्थिति में उसे क्या कार्य करना चाहिए। वह अनिश्चित तथा परेशान हो जाता है। दूसरा व्यक्ति किसी विशेष परिस्थिति में कोई कार्य करता है पर उसे इच्छानुसार फल नहीं प्राप्त होता है। यह व्यक्ति हतोत्साह एवं चिन्तित हो जाता है। एक तीसरा व्यक्ति अयत्न ही विचित्र कार्य कर डालता है। उसके कार्य से उससे सम्बन्धित दूसरे व्यक्तियों को कठिनाई हो सकती है। इन सभी व्यक्तियों के साथ हम व्यवहार-सम्बन्धी समस्याएँ पाते हैं। ये सभी कठिनाई में हैं। इनकी कठिनाई दूर करने के लिए इन्हें सहायता की आवश्यकता है। चिकित्सा मनोविज्ञान हमें यह बतलाता है कि किस प्रकार इनकी व्यवहार सम्बन्धी समस्याएँ दूर करने में इन्हें सहायता दी जा सकती है।

चिकित्सा मनोविज्ञान कई प्रकार के मनोवैज्ञानिक जाँचों का उपयोग करता है। इनकी सहायता से वह यह जानता है कि कोई व्यक्ति कितना बुद्धिमान है, उसके सीखने की योग्यता क्या है, उसकी रुचि क्या है, दूसरे व्यक्तियों के प्रति वह किस प्रकार व्यवहार करता है, अपने सम्बन्ध में तथा दूसरों के सम्बन्ध में उसकी क्या भावनाएँ हैं, इत्यादि। चिकित्सा-मनोविज्ञान किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में बहुत सी बातें उससे या उसके सम्बन्धियों से साक्षात्कार कर पता लगाता है। वह उस व्यक्ति का एक वैयक्तिक इतिहास भी तैयार करता है। इससे उसे किसी व्यक्ति की समस्या के कारण को समझने में सहायता मिलती है। वह उस व्यक्ति की वास्तविक कठिनाई का निर्णय कर पाता है। सम्भवतः उस व्यक्ति को अपने या किसी अन्य व्यक्ति के प्रति किसी प्रकार का निराधार सन्देह हो रहा हो। वह किसी ऐसे उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोशिश कर रहा हो जो उसकी योग्यता से परे है। उसकी आदत हद से अधिक संवेगों द्वारा प्रभावित होने की बन गई हो। ऐसे व्यक्ति की सहायता के लिए चिकित्सा

मनोविज्ञान उन सभी नियमों का उपयोग करता है जिन्हें वह मानव व्यवहार को समझने तथा परिवर्तित करने के लिए जानता है। वह ऐसे व्यक्ति में ऐसी मन स्थिति उत्पन्न करता है जो उसकी भावनाओं, मनोवृत्तियों तथा दृष्टिकोण में परिवर्तन ला देते हैं।

शिक्षा मनोविज्ञान (Educational Psychology)

बच्चे ही आगे चलकर युवक बनते हैं। अपने विकास क्रम में वे तरह तरह के काम तथा तरह-तरह की नई बातें एवं नए विचार सीखते हैं। किन्तु वे सभी व स्वतः नहीं सीखते। समाज ऐसी संस्थाओं का निर्माण करता है जहां इस शिक्षण का नियन्त्रण एवं दिशा निर्देशन किया जाता है। ये संस्थाएँ ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करती हैं जिसमें बच्चों के सीखने का काम सुचारु रूप से अधिक मात्रा में हो सके। स्कूल, कालिज विश्वविद्यालय आदि ऐसे शिक्षण केन्द्र हैं। जिस प्रणाली द्वारा इन संस्थाओं में शिक्षा का काम होता है उसे शिक्षा कहा जाता है।

अच्छी तरह शिक्षा देने के लिए छात्रों के सम्बन्ध में बहुत सी बातों का जानना और समझना आवश्यक है। शिक्षक के लिए विकास की विभिन्न अवस्थाओं में छात्रों की योग्यता का ज्ञान आवश्यक है। उसे यह भी जानना चाहिए कि छात्रों की आवश्यकताएँ क्या हैं जिससे वह उनके शिक्षण को उनकी आवश्यकताओं पर आधारित कर सके। ऐसा स्थिति में शिक्षण सरल होगा और अधिक समय तक कायम रहेगा तथा छात्रों को अधिक प्रयास करने की आवश्यकता भी नहीं होगी। अतः शिक्षा की कौन-सी विधि उपयुक्त होगी इसका निर्णय कर लेना आवश्यक है। इन सभी बातों को अच्छी तरह समझने के लिए हमें मानव स्वभाव तथा व्यवहार के विकास के सम्बन्ध में मनोविज्ञान द्वारा प्राप्त निष्कर्षों का ज्ञान आवश्यक हो जाता है। अतः शिक्षा मनोविज्ञान, मनोविज्ञान का उपयोग शिक्षा की समस्याओं को समझने के लिए करता है।

औद्योगिक तथा व्यवसाय मनोविज्ञान
(Industrial and Business Psychology)

अधिकांश लोगों को अपनी जीविका के लिए काय करना होता है। उन्हें किसी बड़े या छोटे कारखाने में मशीन द्वारा उत्पादन का काय करना पड़ता है। उन्हें किसी व्यवसायी के दफ्तर या दूकान में सामान बेचने या उनके प्रचार का काय करना होता है। वे किसी दफ्तर में भी सेवा का काय कर सकते हैं। किसी कारखाने में किसी व्यवसाय में या किसी दफ्तर में या जहाँ भी वे काय करते हैं उन्हें विभिन्न प्रकार का काय विभिन्न परिस्थितियों में करना होता है। कोई भी व्यक्ति सभी काय कुशलता से नहीं कर सकता है। इनमें अधिकतर काय तो ऐसे होते हैं जिन्हें वह कर ही नहीं सकता है। वह केवल कुछ ही कार्यों को कर सकता है पर उन्हें भी समान कुशलता से नहीं। अतः किसी काय के लिए उपयुक्त व्यक्ति का पता लगाना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उन परिस्थितियों का जो किसी व्यक्ति के लिए काय करने में सहायक अथवा बाधक हो सकती हैं उन्हें भी जानना आवश्यक है। इन सबके लिए यह जानना चाहिए कि किस तरह किसी काय के लिए अच्छे व्यक्ति का चुनाव किया जा सकता है। किस तरह उसके काय करने की परिस्थिति में परिवर्तन लाया जा सकता है, किस तरह दुघटनाओं से बचा जा सकता है आदि। कुछ दुघटनाएँ कभी प्राणघातक होती हैं। कुछ दुघटनाएँ ऐसी भी होती हैं जो व्यक्ति को सदा के लिए बेकार बना देती हैं। इनसे उत्पादन के सामान की बरबादी तथा मशीनों की क्षति भी होती है।

औद्योगिक मनोविज्ञान किसी काय के लिए उपयुक्त व्यक्ति के चुनाव की विधियों को बतलाता है। यह किसी व्यक्ति की काय-दक्षता को कायम रखने तथा उसे उन्नत बनाने की विधियों को भी बतलाता है। यह थकावट कम करने तथा दुघटनाओं से बचने की विधियाँ भी बतलाता है। यह हमें यह भी बतलाता है कि किस प्रकार मानव स्वभाव सम्बन्धी ज्ञान का उपयोग किसी वस्तु के बेचने तथा प्रचार के लिए किया जा सकता है।

औद्योगिक मनोविज्ञान मजदूर तथा मालिक के बीच अच्छे सम्बन्ध बनाए रखने की विधियों पर भी प्रकाश डालता है। मजदूर बड़े या छोटे दलों में काम करते हैं। इस तरह के कई दल एक ही समय काम करते रहते हैं। कुछ व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों को यह बतलाते हैं कि उन्हें क्या करना है और कैसे करना है ? कुछ व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों के कार्यों की देखभाल करते हैं। जो लोग काम की देखभाल करते हैं वे प्रबन्धक कहलाते हैं। प्रबन्धक तथा कार्यकर्ताओं के एवं उनके विभिन्न दलों के बीच अच्छे सम्बन्ध का होना अत्यन्त ही आवश्यक है। उनके बीच कभी-कभी मनभेद तथा झगड़े भी हो सकते हैं। कार्यकर्ता हड़ताल कर सकते हैं। औद्योगिक मनोविज्ञान इन सभी समस्याओं को सुलझाने की विधियाँ बतलाता है। मजदूर तथा मालिक का सम्बन्ध, कार्यकर्ता तथा प्रबन्धक का सम्बन्ध, प्रबन्धक तथा उन संस्थाओं का सम्बन्ध जो कार्यकर्ताओं के हित की रक्षा करती है आदि, उद्योग सम्बन्धी समस्याएँ कहलाती हैं।

२

स्नायु-मण्डल (The Nervous System)

मनुष्य वस्तुओं तथा व्यक्तियों के बीच घिरा रहता है। वह उनके आकार, स्वरूप तथा विभिन्न रंगों को देखता है। वह वातावरण में उत्पन्न आवाजों को सुनता है। वह कुछ वस्तुओं को गंध लेता है, कुछ को खाकर उनका स्वाद अनुभव करता है। कुछ वस्तुओं को स्पर्श करता है और पाता है कि यह चिकना, खुरदरा, मुलायम या सख्त है। वह ठंड और गर्म का भी अनुभव करता है। कभी-कभी किसी नुकीली चीज के चुभने से उस दर्द का भी अनुभव होता है। मनुष्य को ये ज्ञान उसकी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त होते हैं। ज्ञानेन्द्रियाँ वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रभाव को ग्रहण करती हैं। अतः ये ग्राहक (Receptors) कहलाती हैं। इन ग्राहकों पर वस्तुओं और व्यक्तियों का प्रभाव पड़ता है। ये इन्हें उत्तेजित कर क्रियाशील बनाते हैं। वातावरण में सूर्य की रोशनी फैली हुई है। यह रोशनी किसी वस्तु पर पड़ती है। यह रोशनी किस वस्तु से परावृत (Reflected) होकर उस वस्तु को देखनेवाले व्यक्ति की आँखों पर पड़ती है। वह व्यक्ति उस वस्तु के रूप और रंग को देखता है। यहाँ आँखें ग्राहक हैं। रोशनी वस्तु से परावर्त होकर आँखों की ग्राहक स्नायुओं को उत्तेजित कर उन्हें क्रियाशील बनाती है। अतः रोशनी उत्तेजक है।

मनुष्य में कई प्रकार के ग्राहक हैं। इनकी विशेषताएँ भी भिन्न हैं। आकार और रंग के लिए आँख, आवाज के लिए कान, स्वाद के लिए जीभ, गंध के लिए नाक, स्पर्श, दर्द, गर्म, ठंड तथा दबाव के लिए त्वचा ग्राहक हैं। प्रत्येक ग्राहक को उत्तेजित करने के लिए अलग-अलग

मनुष्य केवल देखने सुनने स्वाद लेने गंध तथा गर्म ठंड, दबाव, दर्द आदि का अनुभव ही नहीं करता है वह वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति कार्य भी करता है। इनके कुछ कार्य हाथ और पैर द्वारा होते हैं। कुछ क्रियाएँ शरीर के अन्दर की इन्द्रियाँ भी करती हैं। मनुष्य चारों ओर हवा से घिरा है। साँस द्वारा वह हवा लेता है। साँस लेने की क्रिया शरीर के अन्दर के हिस्से में होती है जिसे हम बाहर से नहीं देखते हैं। इसी प्रकार जब खाने की कोई चीज मुँह में पड़ती है तो चबाने और निगलने की क्रिया होती है। ये क्रियाएँ तभी हो सकती हैं जब मनुष्य जीता रहता है। मनुष्य सारे प्रतिक्रिया की क्रियाओं द्वारा तर रहता है। चबाने और निगलने की क्रिया में जीभ कंठ तथा जबड़े आदि अन्य इन्द्रियाँ भी कार्य करती हैं। जब भोजन पेट में चला जाता है तब वहाँ अन्य प्रकार के कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं। इन्हें पाचन की क्रियाएँ कहा जाता है। शरीर के दूसरे हिस्से जो पेट के अन्दर हैं इन कार्यों को करते हैं। इसी तरह शरीर के अन्दर अन्य इन्द्रियाँ भी विभिन्न प्रकार के कार्य करती हैं।

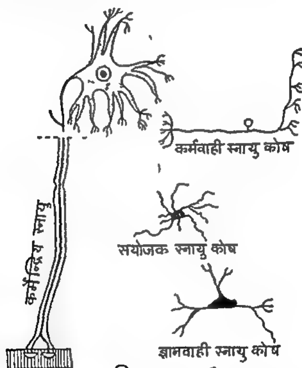
शरीर के वे अंग जिनसे मनुष्य कार्य करता है वे कर्मेन्द्रियाँ अथवा प्रभावक (Effectors) कहलाते हैं। किसी प्रकार का कार्य केवल इन्हीं कर्मेन्द्रियों द्वारा ही होता है। इन्हीं के द्वारा प्राणी वातावरण की वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति कार्य करता है। मनुष्य इन्हीं के द्वारा वातावरण के वस्तुओं और व्यक्तियों पर प्रभाव डालता है। अतः ये प्रभावक (Effectors) कहलाते हैं।

मनुष्य के वातावरण में रहने वाली वस्तु तथा व्यक्ति उसके ज्ञानेन्द्रिय के लिए उत्तेजक का कार्य करते हैं। ज्ञानेन्द्रियों द्वारा वस्तु तथा व्यक्ति के विभिन्न गुणों का बोध होता है। कर्मेन्द्रियों द्वारा वह वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति उत्तेजना द्वारा उत्पन्न ज्ञान के अनुसार कार्य करता है। ऐसा करने के लिए ज्ञानेन्द्रिय तथा कर्मेन्द्रिय ग्राहक तथा प्रभावक के बीच सम्बन्ध स्थापित होना आवश्यक है। व्यक्ति कोई खाने की चीज देखता है। वह उसे उठाकर मुँह में डाल लेता है, चबाता है और निगल जाता

है। कोई व्यक्ति उद्यान पर पड़ी हुई एक चींटी देखता है। उसे उठाकर वह किसी टेबुल की दराज में रख लेता है। वह अपने मित्र की आवाज सुनता है और जिस ओर से आवाज आती है उसी ओर चलने लगता है। परन्तु जब अपना नाम किसी दूसरे का नाम लगता है तो निकट की किसी गली में चला जाता है। इन सभी कर्मों में ज्ञानेन्द्रियाँ तथा कर्मेन्द्रियाँ अपना ग्राहक तथा प्रभावक के बीच सम्बन्ध स्थापित करने वाला कोई तन्त्र भी अवश्य है। शरीर का यही तन्त्र स्नायुमण्डल (Nervous System) कहलाता है। ज्ञानेन्द्रियाँ वस्तु तथा व्यक्ति के प्रभाव को ग्रहण करती हैं, वे उत्तेजित होती हैं और क्रियाशील बनती हैं। इनकी क्रियाएँ अपनी ही तक सीमित नहीं रहतीं। ये ज्ञानेन्द्रियों से सम्बन्धित स्नायुमण्डल को क्रियाशील बनाती हैं। फिर स्नायुमण्डल कर्मेन्द्रियों को क्रियाशील बनाता है। अतः मनुष्य उन वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति काम करता है जो उसकी ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजित करते हैं। स्नायुमण्डल ग्राहक तथा प्रभावक के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। इसलिए इसे सम्बन्धक या संयोजक (Conductor) कहा जाता है। ज्ञानेन्द्रियों के उत्तेजित होने से स्नायुप्रवाह (Nervous energy or Neural impulse) उत्पन्न होता है। स्नायुमण्डल इस स्नायुप्रवाह को एक ज्ञानेन्द्रिय से दूसरी किसी कर्मेन्द्रिय में या कई कर्मेन्द्रियों में ले जाता है जो क्रियाशील हो जाती हैं और इस तरह काम उत्पन्न होता है। इसी प्रकार मनुष्य एक प्रकार की वस्तु या उत्तेजक के प्रति एक प्रकार का काम करता है और दूसरे प्रकार के उत्तेजक या वस्तु के प्रति दूसरे प्रकार का।

स्नायु कोष—सभी प्राणी असंख्य कोषों (Cells) से बने हैं। ये कोष जीवन के प्रारम्भिक तत्व हैं। एक कोष (Cell) सबसे छोटा जीव है। मानव जीवन का आरम्भ केवल एक कोष से ही होता है जिसे बीज कोष (spermatozoa) कहा जाता है। इसी एक कोष से गर्भ में अनेक कोष बनते हैं। अनेक कोषों के बनने से ही मानव शरीर का निर्माण होता है। शरीर का प्रत्येक अंग तथा इन अंगों का प्रत्येक भाग कोषों से ही बना है। अतः

शरीर में अस्थिकोष, चर्मकोष ग्रन्थिकोष ज्ञानेंद्रिय-कोष आदि हैं। स्नायुमण्डल भी कोषों से ही बना है। स्नायुमण्डल के कोष स्नायुकोष (Neurons) कहलाते हैं। स्नायुकोष में एक कोष और स्नायुतंतु (Nerve fiberes) रहते हैं। इन्हें आप इस चित्र में देख सकते हैं।



चित्र १

कुछ कोषों में दो प्रकार के स्नायु रहते हैं। ज्ञानेंद्रिय स्नायु (Dendrides) और कर्मेंद्रिय स्नायु (Axon)। स्नायुप्रवाह ज्ञानवाही स्नायु (Dendrides) से कर्मवाही स्नायु (Axon) में प्रवाहित होते हैं। स्नायुकोष (Neurons) तीन प्रकार के होते हैं कर्मवाही स्नायुकोष

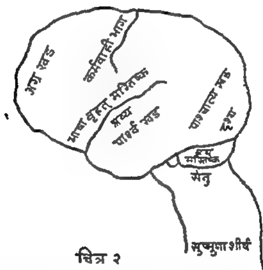
(Motor Neurons), ज्ञानवाही स्नायुकोष (Sensory Neurons)
संयोजक स्नायुकोष (Connector Neurons) ।
स्नायुमण्डल के तीन भाग है। (१) केंद्रिय स्नायुमण्डल (The
Central Nervous System) (२) त्वचा स्नायुमण्डल (The
peripheral Nervous System) (३) स्वतः संचालित स्नायुमण्डल
(Autonomic Nervous System)

केंद्रित स्नायुमण्डल—केन्द्रिय स्नायु मण्डल सुषुम्ना (Spinal
Cord) और मस्तिष्क से बना है। पीठ के बीच में रीढ़ की हड्डी है। यह
पीठ के निचले भाग से गर्दन तक फैली है। यदि आप इस हड्डी को बाहर
से छुएँ तो आप इसके अन्दर एक दूसरे के ऊपर सजाए हुए छोटे-छोटे
गिरह पाएँगे। रीढ़ की हड्डी के भीतर स्नायु तन्तु (Nervous Tissues)
है। रीढ़ की तरह ये भी पीठ के निचले भाग से खोपड़ी के निचले भाग
तक फैले है। यह एक मोटी रस्सी (Cord) की तरह है और इसीलिए
इस (Spinal Cord) स्पाइनल कॉर्ड कहा जाता है।

मस्तिष्क की बनावट—मस्तिष्क सिर की खोपड़ी के भीतर है।
सुषुम्ना की तरह मस्तिष्क भी अदृश्य द्रव्यों का बना है। इसमें भी
अनेकों स्नायु तन्तु (Nervous Tissues) है। मस्तिष्क का बाहरी
सतह वल्क (Cortex) कहलाता है। आप नीचे दिए गए चित्र में देखेंगे
कि मस्तिष्क के तीन प्रमुख भाग हैं। मस्तिष्क का सबसे बड़ा हिस्सा
बृहत मस्तिष्क (Cerebrum) कहलाता है और इसका एक छोटा हिस्सा
लघुमस्तिष्क (Cerebellum) कहलाता है। लघुमस्तिष्क के नीचे तथा
सुषुम्ना से सम्बंधित सेतु (Pons) और सुषुम्नाशीर्ष (Medulla
oblongata) है।

मस्तिष्क की ऊपरी सतह या बृहत मस्तिष्कीय वल्क (Cerebral
Cortex) सेब की ऊपरी सतह की तरह समतल नहीं है। यह
अखरोट की तरह ऊबड़-खाबड़ है। कहीं पर कुछ उभरा हुआ
है और कहीं पर कुछ गहरा है। गहराइयों को दरार (Fissure)

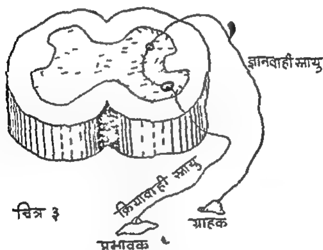
कहा जाता है। ये कुछ मस्तिष्क को सतह को छोटे-छोटे भागों में विभाजित करते हैं। वल्क (Cortex) को एक लम्बी दरार दो भागों में बाँटती है। एक भाग दाहिनी ओर है और दूसरा बाईं ओर। प्रत्येक भाग को गोलार्ध (Hemisphere) कहा जाता है। दोनों गोलार्धों का आकार एक समान है। ऊपर के चित्र में बायाँ गोलार्ध दिखलाया गया



चित्र २

है। प्रत्येक गोलार्ध दरारों द्वारा चार मुख्य हिस्सों में बँटा है। प्रत्येक हिस्से को खण्ड (Lobe) कहा जाता है। वल्क (Cortex) का वह भाग जो ललाट के सामने है अग्रखण्ड (Frontal lobe) कहलाता है। अग्रखण्ड के ऊपर दूसरा हिस्सा है जिसे मध्य खण्ड (Parietal lobe) कहा जाता है। इसका तीसरा हिस्सा सिर के पीछे है जिसे पाश्चात्य खण्ड (Occipital lobe) कहा जाता है। इसका चौथा हिस्सा सिर के बगल कनपटी के पास है जिसे पार्श्व खण्ड (Temporal lobe) कहा जाता है।

स्वक स्नायु-मडल—ज्ञानेन्द्रियाँ तथा कर्मेन्द्रियाँ अथवा ग्राहक तथा प्रभावक सुषुम्ना से सम्बन्धित हैं। यह सम्बन्ध स्नायुओं द्वारा स्थापित होता है। स्नायु (Nerve) स्नायु तन्तुओं (Nervefibers) का समूह है। एक प्रकार के स्नायु सुषुम्ना को ज्ञानेन्द्रियों से सम्बन्धित करते हैं। इन स्नायुओं को ज्ञानवाही स्नायु (Sensory nerves) कहा जाता है। ये अन्तर्गामी स्नायु (Afferent nerves) भी कहे जाते हैं। ये ग्राहकों से उत्पन्न स्नायु प्रवाह को सुषुम्ना तक ले जाते हैं। दूसरे प्रकार के स्नायु सुषुम्ना को कर्मेन्द्रियों से सम्बन्ध स्थापित करते हैं। ये स्नायु क्रियावाही



चित्र ३

स्नायु (Motor nerves) कहलाते हैं। ये बहिर्गामी स्नायु (Efferent nerves) कहे जाते हैं। ये स्नायु प्रवाह को सुषुम्ना से प्रभावकों तक ले जाते हैं। चित्र नं० ३ में यह दिखलाया गया है कि किस प्रकार ज्ञानवाही स्नायु द्वारा स्नायु प्रवाह ज्ञानेन्द्रिय (ग्राहक) से सुषुम्ना तक जाता है और फिर वह किस प्रकार सुषुम्ना से कार्यवाही स्नायुओं द्वारा कर्मेन्द्रिय तक अथवा प्रभावक तक पहुँचता है। शरीर के विभिन्न भागों में इस प्रकार के

कई भानवाही और वायवाही स्नायु है। इन्हीं के द्वारा स्वतः स्नायुमण्डल (Peripheral nervous system) का निर्माण हुआ है। इसे स्वतः स्नायुमण्डल इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह वेन्द्रिय स्नायुमण्डल का सम्बन्ध शरीर में स्थित ग्राहकों एवं प्रभावकों से स्थापित करता है।

अब वेन्द्रिय स्नायुमण्डल के सम्बन्ध में विशेष जानने से पहले प्रभावकों के सम्बन्ध में कुछ बातें जान लेना अधिक श्रेयस्कर होगा। कार्य भी शारीरिक कार्य प्रभावकों के क्रिया द्वारा ही होता है। अतः प्रभावक ही शरीर का कार्यशील बनाने वाले प्रधान अंग है। प्रभावक (Effectors) दो प्रकार के होते हैं—(१) मांसपेशियाँ (Musces) और (२) ग्रन्थियाँ (Glands)।

मांस पेशियाँ—शरीर के प्रत्येक अंग में मांसपेशियाँ हैं। मांसपेशियाँ सिकुड़ती और फैलती हैं। मांसपेशियों के सिकुड़ने और फैलने से हड्डियाँ कण्डरा (Tendons) तथा जोड़ों (Joints) में क्रिया होती है। मांस रज्जु या कण्डराएं (Tendons) मांसपेशियों तथा हड्डियों को सम्बन्धित करती हैं। जब एक मांसपेशी सिकुड़ती है तब कण्डरा उस मांसपेशी से सम्बन्धित जोड़ तथा हड्डी को ऊपर की ओर उठाती है। जब वही मांसपेशी फैलती है तब तनाव खत्म हो जाता है और वह हड्डी या जोड़ अपनी वास्तविक स्थिति में आ जाती है। मांसपेशियों के सिकुड़ने और फैलाव से हड्डियाँ घूमती हैं। इनके घूमने से शरीर का विशेष अंग भी घूमता है। जब मांसपेशियाँ लगातार सिकुड़ती और फैलती हैं तब लगातार गति उत्पन्न होती है। आप अपनी उंगली मोड़ सकते हैं और फिर उसे सीधी भी कर सकते हैं। उंगली के जोड़ और हड्डी में दो तरह की मांसपेशियाँ हैं। इन दोनों का कार्य एक दूसरे से विपरीत है। जब एक सिकुड़ता है, तो दूसरा फैलता है। उंगली के मोड़ने में जब एक तरह की मांसपेशियाँ सिकुड़ती हैं तो उँगली नीचे की ओर झुक जाती है। अब दूसरे प्रकार की मांसपेशियाँ फैलती हैं तब उंगली मुड़ती है। यदि ये मांसपेशियाँ भी सिकुड़ जाती तब उँगली नहीं मुड़ सकती थी। दूसरे क्षण जब आप उँगली सीधी

करते हैं तब वे मांसपेशियाँ जिन्होंने अपनी सिकुड़न से उँगली को नीचे भुका दिया था वे फैल जाती हैं और दूसरी मांसपेशियाँ सिकुड़ती हैं, अब उँगली ऊपर उठती है और यह सीधी हो जाती है। इस तरह की कई मांसपेशियाँ शरीर के प्रत्येक अंग में हैं और इनके काम एक दूसरे से सर्वथा विपरीत होते हैं। जब एक सिकुड़ती है तब दूसरी फैलती है। इस सिकुड़न और प्रसारण की क्रिया को 'पारस्परिक-स्नायुप्रदान' (Reciprocal innervation) कहा जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब एक तरह की मांसपेशियाँ क्रियाशील होती हैं तो दूसरी मांसपेशियाँ विश्राम करती हैं।



धारीदार मांसपेशियाँ



चिकनी मांसपेशियाँ

चित्र ४

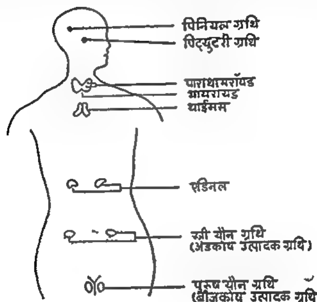
मांसपेशियों की बनावट मुख्यतः दो प्रकार की है (१) धारीदार मांसपेशियाँ तथा (२) चिकनी मांसपेशियाँ (1 Striped muscles and 2 Smooth muscles)। धारीदार मांसपेशियों में धारीदार लकीरें हैं तथा चिकनी मांसपेशियों में धारी नहीं रहती है। शरीर के वे अंग जिनमें हम बाहर की वस्तुओं या व्यक्तियों के प्रति काम करते हैं उनमें धारीदार मांसपेशियाँ रहती हैं। अतः, बाँह, पैर, कमर, गर्दन में धारीदार मांसपेशियाँ हैं। इन अंगों की हड्डियों को कंकाल (Skeleon) कहा जाता है।

अत इनको मासपेशियाँ 'कंकाल पेशी' (Skeletal muscles) कहलाती हैं। शरीर के आन्तरिक भाग में जैसे, हृदय, फेफड़ा, पेट, रक्त-संस्थान आदि में चिकनी मासपेशियाँ हैं। ये आन्तरिक अग अन्तरावयव (Visceral Organs) कहलाते हैं। इनमें चिकनी मासपेशियों के सिकुड़न और प्रसारण से गति उत्पन्न होती है।

ग्रन्थियाँ—ग्रन्थियाँ भी एक प्रकार के प्रभावक हैं। ग्रन्थियो का *काय एक प्रकार का रसायन पदार्थ छोड़ना है जिसे स्राव कहा जाता है।* कुछ ग्रन्थियो को तो हम अच्छी तरह जानते हैं जैसे अश्रुग्रन्थि (Tear gland) जिसके स्राव से आँखों से अश्रु निकलते हैं। स्वेद-ग्रन्थि (Swet gland) जिसके स्राव से पसीना (स्वेद) निकलता है। इनके अतिरिक्त शरीर के अन्दर और भी कई ग्रन्थियाँ हैं। इनमें से कुछ ग्रन्थियो के स्राव एक विशेष नालिका द्वारा निकलता है। इन्हें नालिकायुक्त ग्रन्थियाँ (Duct glands) कहा जाता है। इनमें स्राव के निकलने के लिए एक नालिका लगी रहती है। कुछ ग्रन्थियाँ नालिकाविहीन (Ductless) हैं। इनमें नालिकाएँ नहीं लगी रहती हैं, अत ये नालिका *विहीन-ग्रन्थियाँ (Ductless glands)* कहलाती हैं। नालिकायुक्त ग्रन्थियाँ जैसे अश्रु ग्रन्थि, स्वेद-ग्रन्थि आदि बहिस्रावी-ग्रन्थियाँ कहलाती हैं। नालिकाविहीन ग्रन्थियाँ अन्त स्रावी ग्रन्थियाँ कहलाती हैं। इनके स्राव सीधे रक्त में जाते हैं। समस्त शरीर में धमनियो द्वारा रक्त का सचालन होता रहता है। ये धमनियाँ शरीर के प्रत्येक अग में हैं और इनमें प्रतिक्षण रक्त सचालन होता रहता है। धमनियो द्वारा निरन्तर रक्त सचालन को रक्त प्रवाह (Blood stream) कहा जाता है क्योंकि नदी के प्रवाह की तरह रक्त प्रवाह भी प्रतिक्षण होता रहता है।

अन्त स्रावी-ग्रन्थियो के कई प्रमुख काय हैं। इनके स्राव शारीरिक विकास, शरीर में विभिन्न धातु के उत्पादन एव विभिन्न शारीरिक अगो के कार्यों को प्रभावित करते हैं। आगे के चित्र में कुछ प्रमुख अन्त स्रावी
[illegible]या गया है।

सुषुम्ना—सुषुम्ना स्नायुतन्तुओं की एक शृंखला है। इसका प्रसार पीठ के निचले हिस्से से मस्तिष्क के निचले भाग तक है। सुषुम्ना के विभिन्न भाग ऊपर से नीचे तक एक दूसरे से सम्बंधित हैं। ये मस्तिष्क से भी सम्बंधित हैं। जब कोई ग्राहक उत्तेजित होता है तो स्नायुप्रवाह



चित्र ४

ज्ञानवाही स्नायु द्वारा सुषुम्ना के किसी एक भाग में जाता है। ये स्नायु-प्रवाह ऊपर मस्तिष्क की ओर भी जा सकते हैं और ये नीचे कर्मवाही स्नायु द्वारा किसी कर्मेंद्रिय में भी पहुँच सकते हैं। (चित्र न० ३)

कोई बच्चा एक खिलौना देखता है। वह उसे पाने के लिए अपने हाथों को आगे की ओर बढ़ाता है। रोशनी खिलौने से टकराकर बच्चे की आँखों के ग्राहकों पर पड़ती है। ग्राहकें उत्तेजित होती हैं, स्नायु प्रवाह

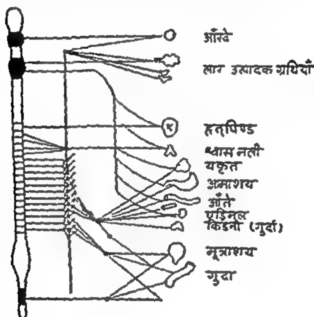
उत्पन्न होते हैं। ये स्नायु प्रवाह जिस स्नायु द्वारा चलते हैं उसे हम दृष्टि स्नायु कहते हैं। दृष्टि स्नायु आँखों का सम्बन्ध, सुषुम्ना के सबसे ऊपर वाले भाग से, जो मस्तिष्क के सबसे निचले भाग तक जाते हैं, स्थापित करते हैं। इसी द्वार से स्नायु प्रवाह ऊपर जाने वाले स्नायु-तन्तुओं में जाते हैं और अन्त में यह प्रवाह वृहत मस्तिष्कीय-खण्ड के पाश्चात्य-खण्ड (Occipetal lobe) में पहुँचते हैं। पाश्चात्य-खण्ड में स्नायु-तन्तु उत्तेजित होते हैं जिसके फलस्वरूप बच्चा खिलौने को देखता है, उसे उसके आकार और रंग का बोध होता है। स्नायु प्रवाह ऊपर बढ़ने के साथ-ही-साथ सुषुम्ना से नीचे की ओर भी आता है। ऐसी स्थिति में स्नायु प्रवाह कार्यवाही स्नायुओं द्वारा हाथों और बाँहों तक पहुँचता है। हाथ और बाँहें खिलौने की ओर बढ़ते हैं और उसे उठा लेते हैं।

स्वतः सचालित स्नायु सस्थान

सुषुम्ना स्नायुओं द्वारा शरीर के उन अंगों से भी सम्बन्धित हैं जो जीवन के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। हृदय, फेफड़ा, यकृत (Liver) रक्तवाप (Blood Vessels) पात आदि पेट के ऐसे ही विभिन्न अंग हैं। इन अंगों का उपयोग मनुष्य वातावरण की वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति कार्य करने के लिए नहीं करता है। ये शरीर का स्वस्थ बनाए रखते हैं। ये मनुष्य के विभिन्न अंगों को स्फूर्ति प्रदान करते हैं जिससे वह वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति कार्य करता है। हृदय, फेफड़ा, पेट तथा शरीर के अन्य सभी अंग जो जीवन और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं सभी एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। व सुषुम्ना के विभिन्न स्तरों से भी सम्बन्धित हैं। स्नायुओं का वह समूह जो इन्हें एक दूसरे से तथा सुषुम्ना से सम्बन्धित करता है उसे स्वतः सचालित स्नायु मण्डल (Autonomic nervous system) कहा जाता है।

स्वतः सचालित स्नायु मण्डल स्नायु-मण्डल का तीसरा भाग है। ये स्वतः सचालित इसलिए कहलाते हैं क्योंकि जिन अंगों को ये सम्बन्धित

करते हैं उनपर मस्तिष्क का नियन्त्रण नहीं रहता है, ये स्वतन्त्र रहते हैं। साधारणतः कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छा से अपने हृदय की गति परिवर्तित नहीं कर सकता है, न वह धमनियों में रक्त की दौरान को बढ़ा या घटा सकता है और न वह अपने पेट की आन्तरिक क्रियाओं को प्रभावित कर सकता है। दूसरी ओर कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार अपनी बाँहों को



चित्र ६

ऊपर उठा सकता है या नीचे गिरा सकता है अपने पैरों को जिस ओर चाहे घुमा सकता है। अपनी पलकों को मूँद सकता है, अपनी पीठ को झुका सकता है। ये अंग मस्तिष्क के नियन्त्रण में रहते हैं। स्वतः संचालित स्नायुमण्डल जिन अंगों को संचालित करता है वे सुषुम्ना से भी सम्बन्धित हैं। (चित्र नं० ६) इन अंगों की क्रिया से जो प्रवाह उत्पन्न

होते हैं वे सुषुम्ना द्वारा मस्तिष्क में पहुँच जाते हैं। इसी कारण हमें कभी कभी इसकी क्रियाओं की भी अनुभूति होती है। अत हमें कभी हृदय की धड़कन, साँस की तीव्र गति एवं पेट के दर्द का अनुभव भी होता है।

मस्तिष्क के कार्य

केन्द्रिय स्नायु मण्डल मनुष्य के शारीरिक तथा मानसिक क्रियाओं में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण काम करते हैं। सभी प्रकार की मानसिक क्रियाओं के लिए मस्तिष्क विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। वृहत मस्तिष्क के कुछ भागों के उत्तेजित होने पर ही हमें विभिन्न प्रकार की संवेदनाएँ हो सकती हैं। ये भाग ज्ञानवाही क्षेत्र (Sensory area) कहलाते हैं। जब आँखों के ग्राहकों से स्नायु प्रवाह मस्तिष्क के पाश्चात्य खण्ड में पहुँचता है तब हमें दृष्टि संवेदना होती है, हम रोशनी और रंग देखते हैं। श्रवण संवेदना तभी होती है जब कानों के ग्राहकों में उत्पन्न स्नायु प्रवाह मस्तिष्क के पार्श्व खण्ड में पहुँचता है। इसी प्रकार स्पर्श, ठंड, गर्मी, और दबाव की संवेदनाएँ तभी होती हैं जब इनके विभिन्न ग्राहकों में उत्पन्न स्नायु प्रवाह मस्तिष्क के मध्यखण्ड के विशेष भागों में पहुँचते हैं। गन्ध तथा स्वाद की संवेदनाएँ मस्तिष्क के किस भाग से होती हैं इसका अभी तक ठीक-ठीक पता नहीं चला है।

वृहत मस्तिष्कीय वल्क के अन्य क्षेत्रों के उत्तेजित होने से अन्य प्रकार की मानसिक प्रक्रियाएँ भी होती हैं जैसे, प्रत्यभिज्ञान, स्मरण, कल्पना, चिन्तन, इच्छा, चुनाव, निर्णय आदि। वृहत मस्तिष्कीय वल्क का वह क्षेत्र जिनसे ये काम सम्पन्न होते हैं वे संयोजक क्षेत्र (Association area) कहलाते हैं।

मनुष्य जिन क्रियाओं को अपनी इच्छानुसार करता है उनमें मस्तिष्क की क्रियाएँ होती हैं। ऐसी क्रियाएँ ऐच्छिक क्रियाएँ (Voluntary action) कहलाती हैं। ऐच्छिक क्रियाएँ तभी होती हैं जब मस्तिष्क का अग्रखण्ड क्रियाशील होता है। अत यह क्षेत्र कार्यवाही क्षेत्र कहलाता है।

नए काय सीखने में अधिकतर ऐच्छिक-क्रियाएँ होती हैं। अत सीखना बिना वृहत मस्तिष्कीय बल्क की क्रियाओ के नहीं हो सकता है। किसी सीखे हुए काय के सम्पन्न होने में, जिसे हम आदत भी कहते हैं वृहत मस्तिष्कीय बल्क का प्रमुख हाथ रहता है। जब कोई व्यक्ति साइकिल चलाना अच्छी तरह सीख लेता है तो पडिल चलाने का काय स्वभाविक बन जाता है। वह ज्योंही साइकिल पर चढता है त्योंही पडिल चलाने लगता है। किन्तु मस्तिष्क के उस क्षेत्र को जिससे यह क्रिया होती है यदि घायल कर दिया जाय तो वह इस आदत को भूल भी जा सकता है।

सहज क्रियायें

मनुष्य के कुछ काय ऐसे भी होते हैं जिनमें मस्तिष्क की क्रियाओ की आवश्यकता नहीं होती है। ऐसी क्रियाएँ सहज क्रियाएँ (Reflex action) कहलाती हैं। जब कोई व्यक्ति नस लेता है तो उसे छींक आती है। इसी तरह जब कोई खाने की चीज मुँह में डाली जाती है तब मुँह में तरी आ जाती है। इसे लार टपकने की सहज क्रिया कहा जाता है। जीभ में भी ग्राहक हैं। मुँह के अन्दर खाने की चीज उन्हें उत्तेजित करती है। इन ग्राहकों के उत्तेजित होने स कठ की ग्रथियाँ कायशील होती हैं। ये लार ग्रथियाँ कहलाती हैं। इन ग्रथियों के स्राव को लार कहा जाता है। इन ग्रथियों की क्रिया से लार उत्पन्न होता है जो मुँह को तर बना देता है। आपका हाथ किसी गम बतन पर पड जाता है और यह स्वत खिच जाता है। ऐसी स्थिति में त्वचा पर ताप के ग्राहक उत्तेजित होते हैं। इससे उत्पन्न स्नायु प्रवाह ज्ञानवाही स्नायु द्वारा सुषुम्ना में जाता है। सुषुम्ना से ये प्रवाह कायवाही स्नायु द्वारा हाथ के प्रभावक तक पहुँचते हैं जिसके परिणाम स्वरूप हाथ हटाने का काय होता है। इस सहज क्रिया को हटाने की सहज क्रिया (Withdrawal reflex) कहा जाता है। (चित्र न० ३ सहज क्रिया में होने वाले कायक्रमो को स्पष्ट करता है। इसे सहज-क्रिया धनु (Reflex arc) कहा जाता है।

जब स्नायु प्रवाह सुषुम्ना में पहुँचते हैं तब वे मस्तिष्क में भी जा सकते हैं। जब यह प्रवाह वृहत मस्तिष्कीय बल्क में पहुँचता है तब वस्तु-बोध होता है। आपको घिसे हुए बरतन की गर्मी का बोध होता है। आप गर्मी की संवेदना अनुभव करते हैं। जब हटाने की सहज क्रिया (Reflex action) द्वारा आपका हाथ घिसे बरतन से अलग हो जाता है तब आपके हाथ की गति का बोध होता है। प्रभावक की क्रिया से भी ज्ञानवाही प्रवाह उत्पन्न होते है। हम तीसरे अध्याय में बतलाएँगे कि प्रभावक, मांसपेशियों, जोड़ तथा बंधे में भी कुछ ग्राहक पाए जाते हैं। जब मांस पेशियाँ सिकुड़ती और फैलती है तब इनमें क्रिया उत्पन्न होती है। प्रभावकों की क्रिया इनमें स्थित ग्राहकों को उत्तेजित करती है। इस प्रकार इनमें ज्ञानवाही स्नायु प्रवाह उत्पन्न होते है। ये ज्ञानवाही प्रवाह ज्ञानवाही स्नायु द्वारा सुषुम्ना से होते हुए वृहत मस्तिष्कीय बल्क के ज्ञानवाही क्षेत्र में पहुँचते है। अतः आपको प्रभावक की क्रिया अर्थात् सहज क्रिया का बोध होता है।

किसी व्यक्ति को सभी सहज क्रियाओं का बोध नहीं होता है। कई बार ज्ञानवाही प्रवाह ग्राहक से मस्तिष्क तक नहीं जाते हैं। वह सुषुम्ना तक पहुँचकर प्रभावक में चले जाते है। सहज क्रियाएँ तो होती है पर उस व्यक्ति को इसका बोध नही होता है। शरीर के अन्दर भी बहुत सी सहज क्रियाएँ होती रहती है। रक्त का धमनियों में भेजने के लिए हृदय की गति, साँस लेने और छोड़ने के लिए फेफड़े की गति, धमनियों द्वारा रक्त संचार, ग्रन्थियों की क्रियाएँ पाचनक्रिया आदि सभी सहज क्रियाएँ है। साधारणतः हमें इन सहज क्रियाओं का बोध नहीं होता है।

हमने बतलाया है कि मस्तिष्क सहज क्रिया के लिए आवश्यक अंग नहीं हैं। इस तथ्य का स्पष्टीकरण निम्नकोटि के पशुओं के उदाहरण द्वारा किया जा सकता है। एक जीवित मेंढक के मस्तिष्क को हटा दिया जा सकता है, या एक जीवित कुत्ते के वृहत् मस्तिष्क को काटा जा सकता है। जब किसी पशु का समस्त मस्तिष्क हटा दिया जाता है तब वह पशु

'सुषुम्ना-पशु' (Spinal animal) कहलाता है। जब केवल उसके वृहत् मस्तिष्क को काट दिया जाता है तब वह 'वृहत् मस्तिष्कविहीन पशु' (Decerebrate animal) कहलाता है। एक 'सुषुम्ना पशु' या वृहत् मस्तिष्कविहीन पशु में सभी क्रिया उत्पन्न होती है जब उनके ग्राहक उत्तेजित किए जाते हैं। उदाहरणार्थ एक सुषुम्ना मेंढक (Spinal frog) भूखे मर रहा हो पर वह अपनी इच्छा से भोजन की खोज या तालाब में कूदने का कार्य नहीं करेगा। किन्तु जब आप उसके मुख में कुछ डाल देंगे तब उसमें चबाने और निगलने की सहज क्रियाएँ होने लगेंगी। या, आप उसे जब पानी में डाल देंगे तब उसमें तैरने की सहज क्रिया शुरू हो जायगी। इसी तरह 'वृहत् मस्तिष्कविहीन' कुत्ता अपने मालिक को नहीं पहिचान सकता है और न कोई ऐच्छिक क्रिया ही कर सकता है। इसमें क्रियाएं तभी होंगी जब इसके ग्राहक उत्तेजित किए जायेंगे। इसमें केवल सहज क्रियाएँ हो सकेंगी।

अनेक सहज क्रियाएँ जन्म के समय से ही पायी जाती हैं। इनमें से प्रत्येक सहज क्रिया किसी विशेष उत्तेजक के द्वारा विशेष प्रतिक्रिया के रूप में होती है। उदाहरणार्थ मुँह में खाने की चीज द्वारा लार टपकने की विशेष क्रिया होती है। खाने की चीज जीभ के ग्राहकों को उत्तेजित करती है और तब लार टपकने की सहज क्रिया होती है। जीभ के ग्राहकों के उत्तेजित होने पर लार टपकने की विशेष सहज क्रिया पशुओं तथा छोटे बच्चों में होती है। आयु बढ़ने पर अन्य ग्राहकों को उत्तेजित करने वाले अन्य उत्तेजकों द्वारा भी एक ही प्रतिक्रिया उत्पन्न हो सकती है। इस सम्बन्ध में एक रूसी शरीर क्रिया वैज्ञानिक (Russian Physiologist) पैवलॉव (Pavlov) ने कुत्तों पर प्रयोग किया है। उसे ध्वनि उत्तेजक द्वारा कुत्ते में लार टपकने की सहज क्रिया उत्पन्न करने में सफलता मिली। पहले पैवलॉव ने कुत्ते के मुँह में बिस्कुट का चूर्ण डाल दिया और घण्टी द्वारा ध्वनि दी। इसके बाद उसने घण्टी की ध्वनि दी और कुछ क्षण के बाद उसे बिस्कुट दिया। वह घण्टी की ध्वनि और कुत्ते के मुँह में

बिस्कुट डालने के समय वह क्रमश बढ़ाता गया। उसने देखा कि जब घण्टी बजती थी तब कुत्ते का मुँह लार से तर हो जाता था। कुत्ते के मुह से लार टपकने लगती थी। पहले तो ध्वनि उत्तेजक से लार टपकने की क्रिया नहीं होती थी किन्तु इस प्रयोग में भोजन के बदले ध्वनि से लार टपकने की क्रिया होने लगी। एक नए उत्तेजक और प्रतिक्रिया के बीच सम्बन्ध स्थापित हो गया। दूसरे शब्दों में एक नया ग्राहक प्रभावक सम्बन्ध (Receptor effector Connection) स्थापित हुआ। सहज क्रिया अब इस नए उत्तेजक द्वारा उत्पन्न हो सकती है। कान के ग्राहकों के उत्तेजित होने पर लार ग्रन्थियों की क्रिया अब हो सकती है। इस प्रकार की सहज क्रिया को पैवलॉव ने सम्बन्ध प्रतिक्रिया (Conditioned Reflex) कहा है। जिस विधि से यह नया सम्बन्ध स्थापित किया गया उसे सम्बन्धीकरण (Conditioning) कहा गया है। पैवलॉव के प्रयोग में खाने की वस्तु असम्बन्धित उत्तेजक (Unconditioned Stimulus) तथा लार टपकने की असम्बन्धित प्रतिक्रिया (Unconditioned Response) थी। किन्तु जब सम्बन्ध प्रतिक्रिया (Conditioned Reflex) हो गई तब घण्टी की ध्वनि लार टपकने की सम्बन्ध प्रतिक्रिया के लिए सम्बद्ध उत्तेजक बन गया। सम्बन्धीकरण की क्रिया नीचे दिखलाई गई है



बचपन में जब पहले पहल आपके मुह में इमली का एक टुकडा पडा था तब आपके मुँह में पानी आ गया था। इसके बाद आपने इमली कई बार खाई और साथ ही इसका नाम भी सुना। इमली 'शब्द' और लार टपकने की सहज क्रिया के बीच सम्बन्धीकरण हो गया। अब जब आप इमली शब्द सुनते है या इस शब्द को कहीं लिखा देखते है तब आपके मुँह में पानी आ जाता है। कई सम्बन्धित उत्तेजक जैसे—इमली का देखना,

इमली शब्द की ध्वनि या लिखित इमली शब्द पहले से असम्बंधित उत्तेजक इमली के स्वाद, का स्थान ले लेते हैं। अब न केवल इमली के स्वाद से वरन् इमली शब्द से ही आपके मुंह में पानी आ जाता है। अतः एक सम्बंधित क्रिया स्थापित हो गई है।

सम्बंधित क्रियाएं अनैच्छिक क्रियाएँ (Involuntry actions) कहलाती हैं। ऐसी क्रिया मनुष्य के इच्छानुसार नहीं होती हैं। संकल्प एवं इच्छाएँ तभी होते हैं जब मस्तिष्क कार्यशील होता है। एक सरल सहज क्रिया में मस्तिष्क का हाथ नहीं रहता, अतः यह काम अनैच्छिक काम कहलाता है। ऐच्छिक क्रिया में स्नायु प्रवाह पहले मस्तिष्क में उत्पन्न होते हैं और तब ये सुषुम्ना में आते हैं। वहाँ से कार्यवाही स्नायु द्वारा यह हाथ बाँह, पैर, कमर, गर्दन, होठ अथवा जीभ में जाते हैं। साधारणतः इन्हीं अंगों द्वारा ऐच्छिक क्रियाएँ होती हैं। इन्हें हम अपनी इच्छानुसार घुमा सकते हैं। किसी वस्तु को ऊपर उठाना, लिखना, टहलना, सिर घुमाना, बोलना आदि ऐच्छिक क्रियाओं के कुछ उदाहरण हैं।

अधिक अभ्यास के कारण आदत की क्रियाएँ भी अधिकतर सहजक्रिया की तरह होती हैं। किसी वस्तु को देखने, छूने या आवाज से ही विभिन्न प्रकार की क्रियाएँ होने लगती हैं। आदत की क्रिया में अपनी इच्छा या प्रेरणा की व्यक्ति को कोई भी जानकारी नहीं भी रह सकती है। यह बिना किसी संकल्प के भी हो सकती है। जब बच्चा हाथ से खाना सीख लेता है तब ज्योंही उसके सामने खाना आता है त्योंही खाने की समस्त क्रियाएँ खाना मिलाना, कौर बनाकर मुँह तक ले जाना मुँह खोलना आदि होने लगती हैं। ये क्रियाएँ ठीक उसी क्रम में तब तक होती रहती हैं जब तक वह खाना समाप्त नहीं करता है। एक लगी हुई आदत की क्रिया ठीक सहज क्रिया के समान स्वतः होती है। जब एक आदत बन जाती है तब उसे छोड़ना कठिन हो जाता है। व्यक्ति की इच्छा का इस पर कोई भी प्रभाव नहीं होता है। कभी-कभी आदत की क्रिया मनुष्य अपनी इच्छा के विरुद्ध भी करता है। एक रोगी को डाक्टर धूम्र-पान छोड़ देने की

जितनी प्रकार की ज्ञानेन्द्रियाँ हैं उतनी ही प्रकार की संवेदनाएँ होती हैं। हमलोगों को आँखों से सम्बन्धित प्रकाश तथा रंग की संवेदना होती है। हमलोगों को कानों से सम्बन्धित श्रवण तथा ध्वनि की संवेदना होती है। इसी प्रकार हमलोगों को स्वाद, गंध, स्पर्श, दर्द, ताप (गर्म तथा ठंड) स्नायविक तथा गति आदि की संवेदनाएँ होती हैं। इनमें से प्रत्येक किसी विशेष ग्राहक से सम्बन्धित है।

हमलोग विभिन्न प्रकार की संवेदनाओं को उन्हें उत्पन्न करनेवाले विभिन्न प्रकार के उत्तेजकों की दृष्टि से भी देख सकते हैं। उदाहरणार्थ दृष्टि संवेदना प्रकाश किरणों से उत्पन्न होती है। श्रवण संवेदनाएँ ध्वनि लहरों द्वारा उत्पन्न प्रकम्पन से होती हैं। स्वाद तथा गंध की संवेदनाएँ रसायनिक पदार्थों द्वारा उत्पन्न होती हैं, अर्थात उन वस्तुओं द्वारा जो पिघलने या गलने योग्य रहती हैं। विभिन्न संवेदनाओं का वर्णन करते समय हम लोग इन्हें उत्पन्न करने वाले विभिन्न प्रकार के उत्तेजकों का वर्णन करेंगे।

संवेदनाओं का अध्ययन करने के लिए हमलोगों को उन उत्तेजकों के स्वरूप का अध्ययन करना होगा जो इन संवेदनाओं को उत्पन्न करते हैं। हमलोगों को उन ज्ञानेन्द्रियों अथवा ग्राहकों का भी अध्ययन करना होगा जिनके उत्तेजित होने से संवेदनाएँ होती हैं। संवेदना की कुछ इन विशेषताओं को संवेदना की विशेषताएँ कहा गया है।

संवेदना की विशेषताएँ (The Attributes of Sensation)

संवेदना की कुछ सामान्य विशेषताएँ हैं। ये अधिकतर संवेदनाओं में पाई जाती हैं। गुण (Quality) संवेदना की एक ऐसी ही विशेषता है। किसी भी संवेदना का कोई न कोई गुण रहता है। उदाहरणार्थ, दृष्टि संवेदना एक या दूसरे रंग का हो सकता है। स्वाद संवेदना का गुण खट्टा, तीता या कड़ुआ हो सकता है। ऐसा ही अन्य संवेदनाओं के साथ भी होता है।

सवेन्ना का दूसरा गुण तीव्रता (Intensity) है। हमलोग चमकाने तथा फीके रंग के अन्तर को बतलाते हैं। हमलोग तीव्र या धीमी ध्वनि सुनते हैं। हमलोगों को तीव्र या फीके गन्ध की सवेन्नाएँ होती है।

सवेन्ना की तीसरी विशेषता सत्ताकाल (Duration) है। कोई प्रकाश एक क्षण के बाद लुप्त हो सकता है या यह अधिक समय तक रह सकता है। कोई ध्वनि तुरन्त समाप्त हो सकती है या यह लगातार होती रह सकती है।

सवेदना की चौथी विशेषता विस्तार (Extensity) है। आकाश में किसी छोटे सितारे की जगमगाहट एक सीमित क्षेत्र तक रहती है। किन्तु सूर्य का प्रकाश विस्तृत क्षेत्र तक प्रसारित होता है। यदि आपकी त्वचा को किसी बाल की नोक से स्पर्श किया जाता है तो आपको स्पर्श की सीमित सवेदना होती है। किन्तु यदि कोई रुपये का सिक्का आपकी हथेली पर रखा जाता है तो आपकी सवेदना विस्तृत होती है।

ऊपर की चार विशेषताओं में से गुण तथा तीव्रता की अधिक छान-बीन की गयी है। हम उनके सम्बन्ध में बहुत सी बातें जानते हैं। अन्य दो का केवल उल्लेख किया गया है। कुछ मनोवैज्ञानिक उन्हें सवेन्ना की सरल विशेषता नहीं भी मानते हैं। हम लोग विभिन्न सवेन्नाओं की विशेषताओं के सम्बन्ध में प्रत्येक प्रकार की सवेदना के वर्णन के अन्तर्गत जानेंगे।

मनोवैज्ञानिकों ने उत्तेजक की विशेषताओं से सम्बन्धित सवेदना की विशेषताओं के सम्बन्ध में मनोरजक बातों का पता लगाया है। एक अत्यन्त ही क्षीण उत्तेजक द्वारा किसी प्रकार की सवेदना नहीं होती है। यह अनुभव योग्य नहीं रहता है। उदाहरणार्थ एक अत्यन्त ही क्षीण प्रकाश नहीं दिखलाई देता है। कुछ ऐसे सितारे भी है जिन्हें हम बिना यन्त्रों के अपनी आँखों से नहीं देख सकते हैं। उन्हें एक शक्तिशाली टेलिस्कोप या दूर्बीन द्वारा देखा जा सकता है। इसी प्रकार शान्त वातावरण में नस की तरगों द्वारा सुनने योग्य ध्वनि नहीं उत्पन्न होती हैं। यहा उत्तेजक अत्यन्त

ही क्षीण है। किन्तु तूफान के समय या जब नदी में बाढ़ आती है तब लहरें नाद ध्वनि उत्पन्न करती है। उत्तेजक में संवेदना उत्पन्न करने योग्य तीव्रता रहती है। अत तीव्रता की एक सीमा है जिसके नीचे कोई उत्तेजक संवेदना नही उत्पन्न कर सकता है। इसके अतिरिक्त एक एसी भी सीमा है जहाँ संवेदना के गुण में परिवर्तन हो जाता है। आप देखेंगे कि एक विशेष सीमा से कम प्रकाश की तीव्रता में आपको कोई भी रग नही दिखलाई देता है। आप वस्तुओ को देखते हैं पर उनके रगो को नही। जब प्रकाश की तीव्रता बढा दी जाती है तब आप रगों को भी देखने लगते हैं।

उत्तेजक की निम्नतम सीमा जो संवेदना उत्पन्न कर सकती है उसे अनुभव मात्र सीमा' (Threshold) कहा जाता है। आपने किसी कमरे की चौखट को अवश्य देखा है। यह एक विशेष ऊँचाई की रहती है जिससे बाहर से पानी अन्दर कमरे में नही आने पाता है। चौखट पार करने के लिए पानी को इसकी सतह तक आना होगा इसे उसकी ऊँचाई तक पहुँचना होगा। इसी प्रकार किसी उत्तेजक को संवेदना उत्पन्न करने के लिए एक विशेष सतह तक अनुभव मात्र सीमा (Threshold) तक पहुँचना होगा। अत यह अग्रेजी शब्द (Stimulus threshold) इसके लिए उपयुक्त समझा गया है। उत्तेजक या (Stimulus) के लिए जमन शब्द रीज (Reis) तथा (Threshold) के लिए लाईमन (Limen) है। अत (Reis Limen) का अर्थ है उत्तेजक का अनुभव मात्र सीमा (Stimulus threshold)। मनोविज्ञान में R L का उपयोग उत्तेजक के अनुभव मात्र सीमा (Threshold) के लिए संक्षेप में किया गया है। विभिन्न संवेदनाओ के उत्तेजक का अनुभव मात्र सीमा (R L) का पता लगाया जा सकता है। आप रग, ध्वनि स्वर, स्पर्श पीडा, गम तथा ठड आदि संवेदनाओ के उत्तेजक का "अनुभव मात्र सीमा" (R L) जान सकते है।

हमने पहले बतलाया है कि उत्तेजक का अनुभव मात्र सीमा (R L)

किमी उत्तेजक के बोध के लिए निम्नतम मूल्य ह। हम लाग किसी एक ही उत्तेजक की दो मूल्या के 'निम्नतम अनुभव भेद' (Least noticeable difference) पर भी विचार कर सकते हं। यदि आप एक समान दो बनना में चीनी भर दें एक म एक किलोग्राम या १००० ग्राम तथा दूसर मे एक किलोग्राम तथा १८ ग्राम। अब आप किसी ऐसे व्यक्ति को जा इनके वजन का नही जानता ह एक के बाद दूसरे बतन को उठाकर इनके वजन का अनुमान करने का कहें तो अधिक सम्भावना इस बात की ह कि वह दोना के वजन को बराबर बतलाएगा। दूसरे शब्दा में यह कहा जा सकता ह कि दोना बतन वजन की एक ही सवेदना उत्पन्न करते ह। उत्तेजना का अनुपात एक नही हैं किन्तु उनसे जो सवेदनाएँ उत्पन्न होती ह व एक ह। दाना उत्तेजका का अन्तर ध्यान देने योग्य नही रहता ह।

यदि आप दूसरे बतन में दा ग्राम चीनी और मिलाकर इसके सम्पूण वजन को १०२० ग्राम बना देते ह और इसकी भी जानकारी उस व्यक्ति का नही होने देते जिम आप फिर एक के बाद दूसरे बतन का उठाकर वजन का अनुमान करने को कहते है तो आप अब यह देख सकते ह कि वह दूसरे बतन को पहले बतन से अधिक वजन का बतलाता ह। आप उन दाना बतनो को बारबार उठाकर कई बार निणय करने कहते ह और आप यह पाते ह कि अधिकतर वह दूसरे बतन को अधिक भारी बतलाता है। अत आप यह दखते हैं कि दूसरे बतन के वजन म दो ग्राम बढ़ा देने स सवेदना म भी अन्तर उत्पन्न हो जाता ह। इस प्रकार आप इस निष्कष पर पहुँचते ह कि प्रति १००० ग्राम म २० ग्राम वजन और जोडने मे ही वजन की सवदना म अन्तर उत्पन्न हो सकती ह। इमस कम वजन में अतर होने से सवदना म अन्तर होने की कम सम्भावना ह। अत एव हजार ग्राम के वजन म अन्तर अनुभव करने के लिए २० ग्राम अनुभव भेद मात्र (Minimum noticeable difference) समझा जायगा। यह विभिन्न वजना का

सवेदना उत्पन्न करने के लिए 'सीमान्त भेद' बन जाता है। अत इसे सीमान्त भेद (Differential threshold Limen) कहा जाता है। यह भेद के बोध के लिए निम्नतम भेद समझा जा सकता है। D L Differential Limen का सक्षिप्त विवरण है। R L की भाति सभी सवेदनाओं के Differential Limen या D L (सीमान्त भेद) का भी पता लगाया जा सकता है। अत प्रकाश रग स्वाद गन्ध, स्पर्श आदि सवेदनाओं के 'सीमान्त भेद' (D L) का पता लगाया गया है।

मनोवैज्ञानिकों ने सीमान्त भेद (D L) के सम्बन्ध में एक मनोरजक तथ्य का पता लगाया है। किसी भी उत्तेजक के सीमान्त भेद (D L) का सम्बन्ध उस उत्तेजक के साथ निश्चित अनुपात में रहता है। हम लोगो ने देखा कि १००० ग्राम की वजन के लिए २० ग्राम सीमान्त भेद (D L) था। ५०० ग्राम वजन के लिए १० ग्राम सीमान्त भेद (D L) होगा तथा १०० ग्राम के लिए २ ग्राम सीमान्त भेद (D L) होगा। आप इसे हम अनुपात में पाएँगे $\frac{२०}{१०००} = \frac{१}{५०} = \frac{२}{१००} = \frac{१}{५०}$। अत किसी उठाने योग्य वजन का अनुभव भेद मात्र सीमान्त भेद उस वजन का $\frac{१}{५०}$-वाँ भाग होगा। अत किसी वजन को जानकर हम उस वजन के 'सीमान्त भेद' का पता लगा सकते है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि इस सम्बन्ध में एक सामान्य नियम है—किसी सवेदना में अन्तर उत्पन्न करने के लिए उत्तेजक में वृद्धि एक निश्चित अनुपात में अथवा निश्चित अश में होना चाहिए। इस नियम का प्रमाण सभी प्रकार की सवेदनाओं में पाया गया है तथा इसे अधिकतर सत्य पाया गया है।

अनुभव मात्र सीमा तथा सीमान्त भेद (R L and D L) पता लगाने के लिए कई विधियों का उपयोग किया गया है इन्हें मनोशारीरिक विधियाँ (Psycho-Physical methods) कहा गया है। ये ऐसा इसलिए कहलाती हैं क्योंकि इनकी सहायता से हम उत्तेजक तथा सवेदना के सम्बन्ध का निर्णय कर सकते है। उत्तेजक शारीरिक है। यह शारीरिक जगत की

शक्ति हैं तथा सवेदना मनोवैज्ञानिक है। इसकी उत्पत्ति व्यक्ति के अन्तर्गत होती है।

मनोशारीरिक विधियों (*Psycho-Physical methods*) के उपयोग से यह विदित हुआ है कि विभिन्न ज्ञानेन्द्रिया के लिए अनुभव मात्र सीमा (R L) या सामान्य भेद (D L) एक ही नहीं रहता है। एक व्यक्ति बहुत ही धीमा प्रकाश देख सकता है जिसे दूसरा व्यक्ति नहीं देख सकता है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति एक बहुत ही धीमी आवाज सुन सकता है जिसे दूसरा व्यक्ति नहीं सुन पाता है। अथवा, कोई व्यक्ति किसी गन्ध का अनुभव कर सकता है जबकि उस गन्ध का अस्तित्व अन्य व्यक्तियों के लिए नहीं रहता है। व्यक्तियों में सवेदनाओं की क्षमता भिन्न रहती है। उदाहरणार्थ स्वाद में सूक्ष्म अन्तर का पता एक व्यक्ति को लग जाता है तथा दूसरे को नहीं। इसी प्रकार किसी व्यक्ति की कान सगीत के लिए अत्यन्त पतली हो सकती है। वे सगीत में स्वरों के आंशिक भेद को भी अच्छी तरह समझ लेते हैं। कुछ लोगों की आँखें रगों के शेड पहिचानने में अधिक तेज होती हैं वे किसी रग के विभिन्न शेडों को अच्छी तरह पहिचान लेते हैं।

सवेदनाओं के कुछ तथ्यों को समझ लेने के बाद अब हम विभिन्न प्रकार की सवेदनाओं का वर्णन प्रस्तुत करते हैं।

दृष्टि सवेदना (Visual Sensation)

जिस बाह्य-जगत से हम घिरे रहते हैं उसके सम्बन्ध में अधिकतर ज्ञान हमें आँखों द्वारा प्राप्त होता है। अत दृष्टि सबसे मूल्यवान सवेदना है। इसी से इसकी क्षति सबसे अधिक खलती है। नेत्र रोगी की आँखों पर जब पट्टी बाँध दी जाती है तो वह आस-पास की सभी वस्तुओं के रहते हुए भी उनसे बिलकुल दूर हो जाता है।

दृष्टि के लिये उत्तेजक

सूर्य का प्रकाश दृष्टि उत्तेजक है। इसकी अनुपस्थिति में किसी भी

पदार्थ द्वारा उत्पन्न प्रकाश दृष्टि उत्तेजक का कार्य करता है जैसे मोमबत्ती की रोशनी, बिजली की रोशनी आदि। प्रकाश किरणें जब अपने उद्गम से वस्तु तक पहुँचती है तो व वक्र हो जाती है। प्रत्येक किरण तरंग का रूप ग्रहण कर लेती है। ये तरंगे विभिन्न लम्बाई की हो सकती है। इन्हें प्रकाश तरंगे कहा जाता है।



चित्र ७

हम लोग ऊपर के चित्र म विभिन्न लम्बाई तथा विभिन्न ऊंचाई की प्रकाश तरगें देखते ह। इनकी माप माप की अत्यन्त ही छोटी इकाइयां द्वारा होती ह जिन्हें मिली माईक्रोन्स (Millimicrones) कहा जाता है। एक माइक्रोन (Micron) एक मीटर का एक लाखवां हिस्सा या एक मिलीमीटर का एक हजारवां हिस्सा है। आपने किसी 'फुट-स्केल' में मिलीमीटर अवश्य देखा होगा। यह एक इञ्च के पच्चीसवें भाग से कुछ अधिक होता है। मिली माईक्रोन को म्यु (mu) द्वारा व्यक्त किया जाता है। जिन प्रकाश तरगो को मनुष्य की आँखें देख सकती है उनकी सीमा ७६० म्यु (mu) से लेकर ३६० म्यु (mu) तक है।

दृष्टि उत्तेजक अथवा प्रकाश-तरगे केवल लम्बाई म ही नहीं भिन्न होती है। इनकी तीव्रता में भी अन्तर रहता है। प्रकाश तरगो की तीव्रता इन तरगो की ऊँचाई द्वारा व्यक्त होती है। प्रकाश किसी प्रबल या क्षीण स्रोत से आ सकता है। प्रकाश की तीव्रता में अन्तर के अतिरिक्त प्रकाश की जटिलता में भी अन्तर हो सकता है। प्रकाश तरग विशुद्ध अथवा विभिन्न ऊँचाई तथा लम्बाई की मिश्रित तरगें हो सकती है।

जब किसी वस्तु पर प्रकाश पड़ता है। तब वह परावर्त (Reflected) हो जाती है। हम देखेंगे कि सूर्य के प्रकाश में विभिन्न लम्बाई की प्रकाश तरगें मिश्रित रहती है। किन्तु जब प्रकाश किसी वस्तु पर पड़ता

है तब सभी लम्बाई की प्रकाश तरंगें नहीं परावर्त होती हैं। कुछ तरंगें सोख ली जाती हैं। ये नहीं परावर्त (Reflected) होती हैं। जो वस्तुएं एक रंग की दिखलाई देती हैं वे एक ही लम्बाई की तरंगों को परावर्तन करती हैं तथा अन्य को सोखती हैं। ऐसा विभिन्न प्रकार के वस्तुओं के भौतिक पदार्थों की भिन्नता के कारण होता है। अतः वह वस्तु जो लाल रंग की दिखाई देती है वह उन तरंगों का परावर्तन (Reflect) करती है जो ७०० मिलीमाइक्रोन के लगभग होती है। यह अन्य प्रकाश तरंगों को सोख लेता है।

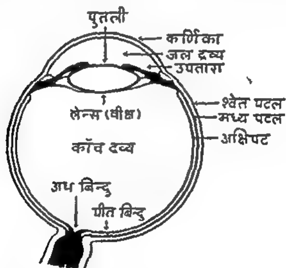
वस्तु से परावर्त प्रकाश (Reflected light) आँखों पर पड़ती है। आँखों की ग्राहकें उत्तेजित होती हैं। हमें दृष्टि-संवेदना होती है। हम प्रकाश तथा रंग देखते हैं।

प्रकाश तथा रंग की संवेदना किस प्रकार होती है यह जानने के पहले हम लोगों को मनुष्य के आँख की बनावट तथा उसकी क्रियाओं के सम्बन्ध में जान लेना चाहिए।

आँख की बनावट तथा क्रियाएँ (Structure and Function of the Eye)

भृकुटि के नीचे खोखले स्थान पर आँखें स्थित हैं। इस स्थान को अक्षिकूप (Socket) कहा जाता है। नेत्र गोलक (Eyeball) से सम्बन्धित कई मांसपेशियाँ हैं। इनकी सहायता से हम आँखों को इधर उधर घुमा सकते हैं। आँख के आगे का भाग पारदर्शी है। इसे कनिका (Cornea) कहा जाता है। कनिका के पीछे पुतली (Pupil) है। पुतली उपतारा (Iris) की मांसपेशियों में बनी एक गोल छेद है। इन मांसपेशियों की क्रियाओं से पुतली बड़ी या छोटी होती है। आँख में प्रकाश इन्हीं पुतलियों द्वारा प्रवेश करता है। जब धीमी रोशनी रहती है तो उपतारा द्वारा पुतलियाँ बड़ी हो जाती हैं जिससे आँख में अधिक प्रकाश पहुँच जाता है। जब प्रकाश दिन की रोशनी की तरह चमकीला होता है तो उपतारा (Iris)

पुतली को सिकोड देता है जिससे आँख के अन्दर कम प्रकाश जाता है। उपतारा (Iris) के पीछे आँख का वीक्ष (Lens) है। यह एक दूसरा पारदर्शी पदार्थ है। वीक्ष (Lens) में सभी ओर से लगी माँसपेशियाँ इसे अपने स्थान पर कायम रखती हैं। ये माँसपेशियाँ सीलीयरी माँसपेशियाँ (Celiary muscles) कहलाती हैं। वीक्ष (Lens) कभी चिपटा और कभी वक्र रूप ग्रहण कर लेता है। ऐसा सीलीयरी माँसपेशियों की क्रियाओं के कारण होता है। जब कोई दूर की वस्तु देखी जाती है तो सीलीयरी माँसपेशियाँ इस तरह सिकुडती और फैलती हैं कि वीक्ष (Lens) का आकार चिपटा और पतला हो जाता है। जब कोई वस्तु निकट रहती है तो ये माँसपेशियाँ



चित्र ८

इस तरह सिकुडती और फलती हैं कि वीक्ष (Lens) का आकार वक्र तथा मोटा हो जाता है। इस प्रकार सीलीयरी माँसपेशियाँ दूर तथा नजदीक की दृष्टि के लिए आँख को अभियोजित करती हैं।

कर्निका (Cornea) तथा ताल (Lens) के बीच एक जेली के समान पदार्थ रहता है जिसे जलद्रव्य (Aqueous humour) कहा जाता है। आँख में ऐसा ही एक दूसरा द्रव्य भी रहता है जिसे काँच द्रव्य (Vitreous humour) कहा जाता है। यह पदार्थ आँख का गेंद के आकार का बनाए रखता है। आँख में तीन पतले आवरण अथवा पतली परतें हैं। बाहर का आवरण श्वेत पटल (Sclerotic) कहलाता है। इसके बाद का दूसरा आवरण मध्यपटल (Choroid) कहलाता है। तीसरा तथा अन्तिम आवरण अक्षिपट (Retina) कहलाता है। चित्र ८ में आँख के विभिन्न भागों को दिखलाया गया है।

अक्षिपट में दृष्टि ग्राहक (Visual receptors) रहते हैं। ये दो प्रकार की होते हैं—दण्डे तथा सूचियां (Rods and Cones)।



चित्र ९

दण्ड तथा सूचि अत्यन्त ही छोटे कोशों के रूप में हैं। इनमें लम्बे स्नायु रहते हैं। ये समस्त रेटिना पर छाये हुए हैं। दण्डों तथा सूचियों की स्नायुएँ एक स्थान पर एकत्रित होती हैं और एक पतले धागे के समान बन जाती हैं। स्नायुओं का यह भाग दृष्टि-स्नायु कहलाता है। जिस स्थान पर दृष्टि-स्नायु अक्षिपट से बाहर निकल जाती है उसे अन्ध बिन्दु (Blind-Spot) कहा जाता है। अन्ध बिन्दु में केवल स्नायु रहते हैं। इनमें

…शा नही रहते । अन्ध विन्दु के निकट अक्षिपट का एक छोटा सा भाग …ह जिसमें केवल सूचियाँ पाई जाती हैं। इसमें दण्ड नही रहते । इस पीत-विन्दु (Yellow-Spot) कहा जाता ह । यह फोविया (Fovea) भी कहलाता है । जब आप किसी वस्तु को देखते हैं तो आपका सिर तथा आपकी आँखें इस प्रकार मुड जाती ह कि उस वस्तु की प्रतिमूर्ति आपकी अक्षिपट के इस भाग पर पडती ह । चित्र न० ६ में दृष्टि-स्नायु अन्ध विन्दु तथा पीत विन्दु दिखलाए गए ह । अक्षिपट के दूसरे भागों म दण्ड तथा सूचियाँ दोनो पाई जाती ह । अन्ध विन्दु तथा पीत विन्दु के आसपास अधिक सूचियाँ ह । इस भाग से हम ज्यो-ज्यो आगे बढते ह दण्डो की सख्या बढ़ती जाती ह । अक्षिपट के दूर के भाग मे केवल दण्ड ह और सूचियाँ प्राय नही के बराबर है । हम लोग अक्षिपट को केन्द्र मध्य तथा बाह्य भागो मे बाँट सकते है । इसके केन्द्र वाले भाग में दण्ड से अधिक सूचियाँ ह इसके मध्य भाग में दण्ड तथा सूचिया की सख्या लगभग बराबर ह । बाह्य भाग म अधिकतर दण्डें ह ।

जब आप किसी वस्तु को देखते है तो उसमे परावर्त्त प्रकाश कनिनिका तथा जलद्रव्य से होकर आँख में प्रवेश करती ह । यह अन्त म अक्षिपट म पहुँचकर अक्षिपट के ग्राहको को (दण्ड तथा सूचियो को) उत्तेजित करती ह । जब किसी वस्तु का आँख से इस प्रकार सम्पर्क होता है कि प्रकाश सीधे पीत विन्दु पर पडती ह तो वह वस्तु आँख की सीधी दृष्टि म कहलाती ह । इस स्थिति में आँखें वस्तु पर केन्द्रित समझी जाती ह । व्यक्ति को वह वस्तु अत्यन्त ही स्पष्ट रूप से दिखलाई देता ह । इसे केन्द्रित-दृष्टि भी कहा गया ह । यदि आप अपने सामने की टेबुल पर रखी हुई किसी वस्तु पर दृष्टि देते है तो वह वस्तु आपको साफ तथा स्पष्ट दिखलाई देता है । टेबुल पर पडी अन्य वस्तुएँ उतनी साफ नही दिखलाई देती । यदि आप अपना सिर घुमाकर अपनी आँखो को इनमें से किसी अन्य वस्तु पर केन्द्रित करें तो यह वस्तु भी साफ तथा स्पष्ट दीखेगी, पहले वाली वस्तु अब अस्पष्ट दीखेगी । आप अपनी दृष्टि नीचे के चित्र 'क' पर केन्द्रित करें

और बिन्दुओं को गिनती कर सकते हैं। आप चित्र १० में 'ख' पर दृष्टि-पात करते समय चित्र ■ को देखेंगे किन्तु आप बिन्दुओं की गिनती नहीं कर पाएंगे।





क चित्र १० ख

आप की दृष्टि 'क' पर केन्द्रित रहेगी तथा 'ख' पर विकेन्द्रित। 'क' की प्रतिमूर्ति (Image) अक्षिपट के मध्य में पीत बिन्दु पर पड़ती है। 'ख' की प्रतिमूर्ति अक्षिपट के बाह्य भाग में पड़ती है। आप 'क' से 'ख' की ओर मुड़ते हैं तो 'ख' आपकी दृष्टि केन्द्र में आ जाता है।

जब किसी वस्तु की प्रतिमूर्ति अन्ध बिन्दु पर पड़ती है तो वह वस्तु नहीं दिखलाई देती है। आप अपनी बाईं आँख बन्द कर लें और दाईं आँख से चित्र ११ के वृत्त को देखें। इस वृत्त के दाहिनी ओर जो सितारे का चित्र बना है वह भी आपको दीखेगा। अब आप पुस्तक को सीधे अपने सामने रखें। आप बाईं आँख बन्द कर वृत्त की ओर देखते रहें। आप सितारे के चित्र को भी देखेंगे। यदि आप धीरे-धीरे पुस्तक को अपने निकट लाएँ या दूर हटाएँ तो एक स्थान ऐसा आयेगा जहाँ पर सितारे का चित्र आपकी दृष्टि से ओझल हो जायगा। इस स्थान पर उस सितारे की प्रतिमूर्ति अन्ध बिन्दु पर पड़ती है।





चित्र ११

सूचियाँ तीव्र प्रकाश में क्रियाएँ करती हैं। दण्डों की क्रियाएँ मन्द प्रकाश में होती हैं। सूचियाँ रंगों की दृष्टि के लिए ग्राहक हैं। हम वस्तुओं

के रंगो को तीव्र प्रकाश में ही देख पाते है। मन्द प्रकाश में सूर्यास्त के बाद हम वस्तुओ को तो देख सकते है पर उनके रंगो को नहीं। हम उन्हें धूसर (Grey) रंग के विभिन्न शेडो के रूप में एक दूसरे से भिन्न समझते है। यदि आप अपने कमरे की रोशनी धीमी कर दें तो आप टेबुल पर पड़ वस्तुओ के रंगो का नही देख सकते है। किन्तु जब आप रोशनी तेज कर देते हैं तब आप रंगों को देख सकते है। धीमी रोशनी में सूचियाँ काम नही करती हैं। केवल दण्ड ही धीमी रोशनी में काम करते है। ऐसी दशा में जो कुछ भी दिखलाई देता है वह दण्डो के उत्तेजित होने के कारण देखा जाता है। हम लोगो ने पहले देखा कि जब किसी वस्तु की प्रतिमा पीत बिन्दु (Fovea) पर पड़ती है तब हम लोगो को उस वस्तु की दृष्टि स्पष्ट होती है हम लोग केवल वस्तुओं के आकार को ही स्पष्ट रूप से नहीं देखते बल्कि उन वस्तुओ के रंगों को भी स्पष्ट देखते हैं। पीत बिन्दु में केवल सूचियाँ पाई जाती है। हम लोग उन वस्तुओं के रंग नहीं देखते जिनकी प्रतिमा अक्षिपट के उन भागो पर पड़ता है जो पीत बिन्दु से दूर है। इन भागों में अधिकतर दण्ड तथा सूचियां पाए जाते हैं।

वौन क्राइस (Von Kries) ने सवप्रथम यह बतलाया कि अक्षिपट में प्रकाश तथा अन्धकार, रंग तथा रंग विहीन दृष्टि के लिए अलग अलग दो प्रकार के भिन्न ग्राहक हैं। इसे दृष्टि का द्वैत सिद्धान्त (Duplicity Theory of Vision) कहा जाता है। इस सिद्धान्त की पुष्टि हो चुकी है और यह सवमान्य है। यह सिद्धान्त बतलाता है कि रंगो के दृष्टि-ग्राहक रंगविहीन दृष्टि ग्राहको से भिन्न हैं।

रंग, चमकीलापन तथा परिपूर्णता
(Hue Brightness and Saturation)

हम लोग दृष्टि उत्तेजक के स्वरूप तथा दृष्टि ग्राहको के आकार तथा कार्यों को समझ चुके है। अब हम लोग दृष्टि संवेदना की विशेषताओ को समझने की कोशिश करें। दृष्टि संवेदना की तीन विशेषताएँ हैं—रंग,

चमकीलापन तथा परिपूर्णता (Hue, Brightness and Saturation)। ये विशेषताएँ दृष्टि उत्तेजक की विशेषताओं से सम्बन्धित हैं।

मनुष्य विभिन्न रंगों को देखता है। हम लोग लाल, हरा, नीला, पीला तथा अन्य रंगों को देखते हैं। देखे गए रंगों में यह भेद अक्षिपट पर पड़ने वाले प्रकाश तरंगों की लम्बाई में भेद से सम्बन्धित है। सबसे अधिक लम्बी प्रकाश तरंगें लाल रंग की तथा सबसे छोटी तरंगें नीललोहित (Violet) रंग की संवेदना उत्पन्न करती हैं। इसी प्रकार विभिन्न प्रकाश तरंगों की लम्बाई द्वारा अन्य रंगों की संवेदनाएं होती हैं। आपने इन्द्रधनुष (Rainbow) अवश्य देखा होगा। इसके अन्तर्गत कई रङ्ग रहते हैं—लाल नारंगी, पीला, हरा, निलोत, आसमानी, लाल लोहित (Red Orange Yellow Green Indigo Blue and Violet) ये रङ्ग प्रकाश तरंगों की लम्बाई के अनुसार एक क्रम में सुसज्जित रहते हैं। यह रङ्ग उपसग रङ्ग (Spectral Colour) कहे जाते हैं। जब सूर्य की रोशनी आइने के किनारे पर पड़ती है तो हम लोग उपसग रङ्ग देखते हैं। सूर्य की किरणों में सभी प्रकार की लम्बाई की प्रकाश तरंगें रहती हैं। अतः सूर्य की किरणें आँखों पर सीधी पड़ती हैं तब कोई भी रङ्ग नहीं दीखता है। किन्तु जब सूर्य की रोशनी किसी आइने के किनारे पर पड़ती है तब वह विभिन्न प्रकाश तरङ्गों में विच्छिन्न हो जाती है और ये प्रकाश लहरियाँ अक्षिपट के विभिन्न भागों पर पड़ती हैं और हम लोग आइने के किनारे वाले भाग में विभिन्न रङ्गों को देखते हैं। निम्नलिखित तालिका में विभिन्न रंगों के प्रकाश तरंगों की लम्बाई मिलीमीटर में व्यक्त की गई है —

४३०	मिलीमान	नीललोहित (Violet)
४७७	"	नील या नीला (Blue)
४८२	"	नीलाहरि (Greenish Blue)
४८७	"	हर्यानील (Bluish Green)
५१५	"	हरि (Green)
५७८		पीताहरि (Greenish Yellow)

५८२ मिलीक्रोन	पीत या पीला (Yellow)
६१० "	नारंगी (Orange)
६६० "	रक्तापीत (Yellowish Red)
६८० "	रक्त या लाल (Red)

चमकीलापन दृष्टि संवेदना की दूसरी विशेषता है। लम्प की रोशनी की अपेक्षा सूर्य की रोशनी में लाल रंग में अधिक चमकीलापन दीखता है। किसी रंग का चमकीलापन प्रकाश की तीव्रता पर निर्भर करता है। तीव्र प्रकाश में प्रत्येक रंग अधिक चमकीला प्रतीत होता है किन्तु धीमी रोशनी में वही रंग फीका दीखता है। अतः प्रकाश की विभिन्न तीव्रता के अनुरूप हम लोग दृष्टि संवेदना में विभिन्न स्तर का चमकीलापन देखते हैं। एक ओर हम उजला तथा दूसरी ओर काला देखते हैं। इनके बीच हम विभिन्न प्रकार के धूसर (Grey) रंगों को देखते हैं। अतः हम उजला भूरा काला की शृंखला (क्रम) पाते हैं।

परिपूर्णता दृष्टि संवेदना की तीसरी विशेषता है। आप गहरा या हल्का लाल रंग देखते हैं। हल्के लाल रंग की अपेक्षा गहरा लाल रंग अधिक परिपूर्ण समझा जाता है। इसी प्रकार गहरा हरा रंग हरानील (Bluish green) से अधिक परिपूर्ण रहता है। अतः रंग की विशुद्धता का ही दूसरा नाम रंग की परिपूर्णता (Saturation) है। रक्तापीत (Yellowish Red) रक्त या लाल (Red) से कम विशुद्ध है। इसी प्रकार रक्त श्वेत (Whitish Red) या गुलाबी (Pink) भी है। रंग की परिपूर्णता प्रकाश उत्तेजक की जटिलता के स्तर से सम्बन्धित है। तुल्य परिमाप का शुद्ध अमिश्रित उत्तेजक परिपूर्ण रंग उत्पन्न करता है।

दृष्टि संवेदना के तथ्य (नियम)
(Facts about Visual Sensation)
रंग मिश्रण (Colour Mixture)

सूर्य के प्रकाश में सभी लम्बाई की तरंग मिश्रित रहती है। हम लोग प्रकाश तरंगों का सम्मिश्रण कृत्रिम ढंग से भी उत्पन्न कर सकते हैं। यह

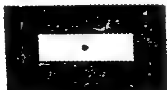
आपको कोई विशेष रग नहीं दिखलाई देगा। आपको रगविहीन सवेदना होगी। इसी तरह घूमते हुए डिस्क द्वारा पीला और नीला रग का समिश्रण भी रगविहीन सवेदना उत्पन्न करेगा। रगो के ये जोड़ परिपूरक रग (Complimentry Colours) कहलाते है। लाल तथा हर्यानील (Bluish Green) परिपूरक रग हैं। पीला और नीला भी परिपूरक है। एक विशेष मात्रा में इनके समिश्रण से प्रत्येक जोड़े से रगविहीन सवेदना उत्पन्न होती है।

कुछ रगो के समिश्रण से रगविहीन सवेदना नहीं भी होती है। ये रग में एक नया शेड उत्पन्न करते हैं। जब आप लाल तथा पीले डिस्क को घुमाते हैं तो आप नारगी (Orange) रग देखते हैं। एक विशेष मात्रा में नीला तथा लाल के समिश्रण से नीललोहित (Violet) रग दिखलाई देता है। जिन रगो के समिश्रण से रगविहीन सवेदना उत्पन्न होती है वे अपरिपूरक रग कहलाते हैं। लाल, हरा तथा नीला को एक दूसरे के साथ विभिन्न मात्राओं में समिश्रण से अनेक रग देखे जा सकते हैं। अत इन रगो को प्राथमिक रग कहा जाता है। लाल तथा हरा को उत्पन्न करने वाले तरगो के समिश्रण से पीला उत्पन्न किया जा सकता है। अत पीला को प्राथमिक रग (Primary Colour) नहीं समझा जाता है।

अनुप्रतिबिम्ब तथा विरोध (After image and Contrast)

आप एक छोटे रगीन धब्बे को लगभग आधे मिनट तक देखें। उसके बाद आप दिवाल की उजली सतह को देखें। आपको दिवाल पर एक पीले रग का छोटा धब्बा दिखलाई देगा। यदि आप किसी दूसरे रग पर दृष्टि केन्द्रित करेंगे तब भी वही बात होगी। किसी रग पर कुछ क्षण के लिए दृष्टि केन्द्रित करने से उस रग का परिपूरक रग रगविहीन पृष्ठभूमि में उत्पन्न होता है। नीला से पीला तथा पीला से नीला रगविहीन पृष्ठभूमि में उत्पन्न होता है। लाल से हर्यानील (Bluish Green) तथा हरा से नीलाहरण (बगनी) (Purple) दीखता है। इस प्रकार उत्पादित रग अनु

प्रतिबिम्ब (After-image) कहलाता है। यह ऐसा इसलिए कहलाता है क्योंकि रंग की उत्तेजना की अनुपस्थिति में आप कोई रंग देखते हैं। और यह अनुभूति रंग उत्तेजक द्वारा अक्षिपट में उत्तेजित होने के बाद होता है। इसे विरोधी अनुप्रतिबिम्ब (Negative after image) कहा जाता है। जो रंग आप देखते हैं वह उत्तेजक रंग का विरोधी या परिपूरक रंग है। आप उजले तथा काले उत्तेजक का भी विरोधी अनुप्रतिबिम्ब देखते हैं। आप नीचे दिए गए चित्र के केन्द्रवाले बिन्दु पर एक आँख बन्द कर और लगभग एक मिनट तक दृष्टिपात करें। उसके बाद किसी उजली सतह पर दृष्टि दें। आप एक विरोधी अनुप्रतिबिम्ब देखेंगे। चित्र का उजला भाग काला तथा काला भाग उजला दीखेगा।



चित्र १२

विरोधी अनुप्रतिबिम्ब (Negative after image) तथा अनुरूप अनु-प्रतिबिम्ब (Positive after image) में अन्तर है। अनुरूप प्रतिबिम्ब

कहा जाता ह। किसी रग पर दृष्टिपात करने स विरोधी रग उत्पन्न होता ह। ऐसा उत्तेजक रग के हट जाने पर होता ह। विरोध प्रभाव उत्तेजक की उपस्थिति म भी हो सकता ह। आप दो चतुभुजाकार रगो को जसे एक लाल तथा दूसरा हर्यानील (Bluish Green) को अगल-बगल रखें। आप दखेंगे कि लाल पहले से अधिक लाल तथा हरा पहले से अधिक हरा दीखगा। किसी प्रकार के रग का धब्बा अपने इद गिद अपने परिपूरक रग को उत्पन्न करता ह। यदि आप अपरिपूरक रगो को अगल-बगल रखें तब विरोध प्रभाव दूसर प्रकार का होगा। उदाहरणार्थ आप लाल तथा पीला को लें। यहाँ लाल रक्तानील (Bluish Red) तथा पीला पीला हरि (Greenish Yellow) दीखगा। यदि आप इन्ही रगो को एक दूसर से दूर हटाकर रखेंगे तब यह केवल विशुद्ध लाल या विशुद्ध पीला दिखलाई दगा। विरोध प्रभाव उजले तथा काल म भी दखा जायगा। इसी कारण काले रग का छाप अन्य किसी पष्ठभूमि स उजले पर अधिक स्पष्ट दीखता ह।

अनुकूलन (Adaptation)

जब आप बन्द कमरे से सूर्य के तीव्र प्रकाश में आते ह तो सूय का प्रकाश आपको अधिक चमकीला प्रतीत होता ह। आपकी आखें चकाचौंध हो जाती ह। अब यह प्रकाश इतना चमकीला नही प्रतीत होता ह। इसे प्रकाश अनुकूलन कहा जाता ह। जब आप किसी अँधेरे कमरे म प्रवेश करते ह तो सवप्रथम आप उस कमरे की किसी वस्तु को नहीं दख पाते हैं। उस कमर म आपको अपना रास्ता भी नही दिखलाई द सकता ह। किन्तु कुछ समय बाद आप उस कमरे की वस्तुओं को देखने लगते ह। आपकी आँखें अधकार अनुकूलित हो जाती ह। आपको ऐसा अनुभव ल्म आरम्भ होने के बाद सिनेमा भवन में प्रवेश करने पर अवश्य हुआ गा। किन्तु जब आपकी आँखें अन्धकार अनुकूलित हो जाती ह फिर भी प अपने आसपास के वस्तुओ के रगो को नही दखते हैं। आपने पहले

पड़ा ह कि रग तभी देखे जाते हैं जब सूचियाँ उत्तेजित होती हैं। मन्द प्रकाश में सूचियाँ उत्तेजित नही हो सकती हैं। अन्धकार म दण्ड काय करते ह। अन्धकार अनुकूलन से दण्ड अधिक सूक्ष्मग्राही हो जाते हैं।

रग अधापन (Colour Blindness)

तीव्र प्रकाश म आप वस्तुओ के रगो को देख सकते हैं तथा इनके परस्पर अन्तर को बतला सकते हैं। किन्तु कुछ व्यक्ति तीव्र प्रकाश म भी रगो को नही देख पाते ह। ये रगान्ध कहलाते हैं। इन्हें सभी वस्तुए उजली काली या धूसर (Grey) दीखती ह। एक ही आकार किन्तु विभिन्न रगो की कई वस्तुएँ उन्हें बिलकुल एक समान प्रतीत होगी। रगान्ध व्यक्तियो के अक्षिपट मे सूचियो का अभाव रहता ह। इनमें केवल दण्ड ही रहते ह या कभी-कभी सूचियाँ रोगग्रस्त होने के कारण क्रियाशील नही होती ह। रगान्ध व्यक्ति को अधिक प्रकाश म वस्तुओ को देखने मे भी कठिनाई होती ह। अत प्रकाश से बचने के लिए ऐसे व्यक्ति अपनी आँखें अधखुली रखते ह।

ऐसे व्यक्ति जिन्हें कोई रग नही दिखाई देता वे पूर्ण रगान्ध कहलाते ह। कुछ ऐसे व्यक्ति भी होते हैं जो आशिक रगान्ध रहते ह। इनमे लाल और हरे रग का अधापन रहता ह। ये लोग लाल और हरा रग नही देख सकते ह। वे उसे पीला के साथ गडमड (Confuse) कर देते हैं। उनके रगो का ससार नीला और पीला तक सीमित रहता ह। सडक के चौराहा पर आप सकेतात्मक लाल और हरे रग की रोशनी देखते हैं। लाल रोशनी से ठहरने का सकेत मिलता ह और हरी रोशनी से आगे बढने का। इसी तरह के अवसर आप रेलवे स्टेशनो पर भी देखते ह। अत मोटर तथा रेलगाडी के चालको को एव सकेत देनेवाले व्यक्तियो को लाल और हरे रग के अधापन की जाँच मे उत्तीर्ण होना होता ह।

रग अधापन की जाँच आसानी मे हो सकती ह। एक छोटे ट्रे में विविध आकार तथा विभिन्न रगो की माला रख लें। जिस व्यक्ति को

जाँच करनी है उसे लाल, हरे, नाले तथा पीले मोतियों को अलग अलग बक्सों में रखने का आदेश दें। यदि कोई व्यक्ति लाल और हरा रंगान्ध है तो आप देखेंगे कि वह लाल हरे और पीले मोतियों को एक साथ मिला देगा।

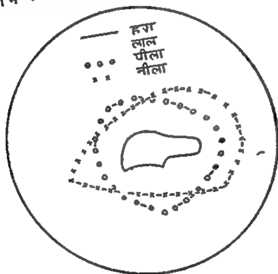
आंशिक रंगान्ध की जाँच एक अन्य रीति से भी की जाती है। लाल, हरे और पीले रंग के बुन्दों में कुछ अंक लिखे रहते हैं। जैसे लाल बुन्दों में ५ लिख दिया जाय, इसके इर्द गिर्द अन्य रंगों के बुन्दे हों। एक औसत व्यक्ति इस अंक को देख सकता है। वह अंक के बुन्दों को अन्य बुन्दों से भिन्न समझता है। किन्तु एक रंगान्ध व्यक्ति उस अंक को नहीं देख सकता है। लाल बुन्दों को वह हरे या पीले बुन्दों के साथ गड़बड़ कर देता है। इस प्रकार की विशेष जाँचिकाएँ बना ली गई हैं। इन रंग अध्यापन को इशीहार जाँच (Ishihar Test) कहा जाता है।

रंगक्षेत्र (Colour Zones)

आप वसन्त ऋतु में किसी एक बगीचे में खड़े हों जहाँ रंग-बिरंगे फूल खिले हों। किसी एक फूल को आप नजदीक से देखते रहें। आप केवल उसके रंग को ही नहीं बरन् उसके विभिन्न अंशों को भी स्पष्ट देखेंगे। यदि आप फूलों के नाम से परिचित हैं तो आप केवल उसका नाम ही नहीं बतलाएँगे। सम्भवतः आप उसकी पंखुड़ियों को भी गिन ले सकते हैं। उस फूल को देखते समय उसके आस-पास के अन्य फूल तथा पौधे भी आपको दिखलाई देंगे किन्तु वे उतना स्पष्ट नहीं दीखेंगे। आप उस फूल के बिलकुल समीप वाले फूलों के रंगों को देख सकते हैं किन्तु आप इनके आकार तथा स्वरूप को अच्छी तरह नहीं देख सकते हैं। इन फूलों की आगे की वस्तुओं को भी आप देख सकते हैं किन्तु आप यह नहीं निश्चय कर सकेंगे कि वे क्या हैं? इससे आगे आपको कुछ भी नहीं दिखाई पड़ेगा। किसी एक फूल को सीधे देखते समय जिस नेत्र में कुछ वस्तुएँ आपको बिलकुल स्पष्ट, तथा कुछ अस्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं उसे आपका

दृष्टिक्षेत्र कहा जाता है। दृष्टिक्षेत्र के अन्तर्गत एक छोटा क्षेत्र रहता है जिन हरों या दृष्टिक्षेत्र या रंगक्षेत्र कहा जाता है। रंग दृष्टिक्षेत्र के अन्तर्गत वस्तुएँ अपने रंग के साथ दिखलाई देती हैं। इस क्षेत्र के बाहर ये बिना अपने रंग के दिखाई देती हैं।

दृष्टिक्षेत्र की तरह अक्षिपट में भी विभाजन है। ये अक्षिपट क्षेत्र (Retinal Zone) कहलाते हैं। अक्षिपट में आप एक केन्द्र क्षेत्र पाते हैं। प्रकाश तरंगें जो इस भाग पर पड़ती हैं वे अपने मनुष्य लाल, हरे, पीले और नीले रंगों में देखा जा सकता है। केन्द्रक्षेत्र के आगे मध्यक्षेत्र है।



चित्र १३

इस क्षेत्र में प्रकाशतरंगें केवल दो रंगों में हरे, पीले और नीले में देखा जाता है। मध्यक्षेत्र के आगे बाह्यक्षेत्र है। इस क्षेत्र में सभी उत्तेजक रंगहीन दीखते हैं। ये केवल उजले काले तथा धूसर की संवेदना उत्पन्न

करते हैं। अक्षिपट के रंग क्षेत्र (Retinal Colour Zones) चित्र १३ में दिखलाए गए हैं।

श्रवण संवेदना (Sensation of Hearing)

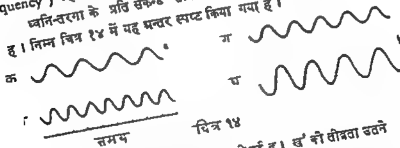
दृष्टि से हम वस्तुओं के साथ अभियोजन में सहायता मिलती है। इनके द्वारा हमें उनकी विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त होता है। यह हम वर्तमान तथा भूतकाल के विचारों तथा अनुभूतियों से अवगत कराता है। आधुनिक युग में हम उन्हें प्रचुर मात्रा में पढ़ने योग्य सामग्रियों के अन्तर्गत पाते हैं। श्रवण हमें आसपास के व्यक्तियों के साथ अभियोजन में सहायक होता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अतः उसका वर्णन बोलता पशु के रूप में किया गया है। सामाजिक परिस्थितियों में व्यक्तियों की परस्पर प्रतिक्रियाएँ होती हैं। इनमें से अधिकतर प्रतिक्रियाएँ बोलने तथा सुनने की होती हैं। जनता को प्रवित कर देनेवाले विचार, लिखने तथा पढ़ने से अधिक प्रभावशाली ढंग से बोलने और सुनने के द्वारा जनता तक पहुंचते हैं। एक बहिरा व्यक्ति अपने को समाज से अलग पाता है। वह भीड़ में भी अकेलापन अनुभव करता है। अतः मनुष्य के लिए श्रवण दृष्टि से कम महत्व नहीं रखता है।

श्रवण उत्तेजक (The Stimulus for Hearing)

ध्वनि-तरंगें में श्रवण उत्तेजक रहते हैं। ध्वनि-तरंगें वायुकणों के प्रकम्पन द्वारा उत्पन्न होती हैं। वायु सभी रिक्त स्थानों में है। इसमें अत्यन्त ही सूक्ष्म कण रहते हैं। आप कभी-कभी अपने कमरे की खिड़की के छेद से आती हुई सूर्य की रोशनी में इन्हें नाचती देखते हैं। प्रकम्पन पीछे और आगे की गति है। जब आप किसी लाह को छड़ को पीटते हैं तो आप इसमें इस तरह के पीछे और आगे की गति का अनुभव करते हैं। यह प्रकम्पित होता है। जब कोई शब्द बोला जाता है तो वायुकणों में प्रकम्पन आरम्भ हो जाता है। यह प्रकम्पन निकटवर्ती कणों में चला जाता

ह। इसमें पीछे और आगे की गति रहती है इसलिए यह तरंगों की तरह
बन जाती है। आपने इसी प्रकार के तरंगों को किसी पोखरे में पत्थर
फेंकने के बाद अवश्य देखा होगा। जल पीछे और आगे की ओर तब तक
बढ़ता रहता है जब तक लहर शान्त नहीं हो जाती। इसी से गति की
तरंगें उत्पन्न होती हैं। पेंडुलम की गति में भी आप प्रकम्पित गति का
उदाहरण पाते हैं। पेंडुलम में पीछे और आगे की गति होती है। प्रत्येक
बार यह एक गति-चक्र तय करता है। यह मध्य से दाहिनी ओर तब बाईं
ओर और तब फिर यह बीच के स्थान में पहुंचता है। तरंग की आकृति
यह पूरा चक्र इस आकार का होता है ∽। पेंडुलम की गति तीव्र या मन्द
हो सकती है। इस भेद को एक निश्चित समय में होने वाले गति-चक्र की
संख्याओं द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। इस चक्रों की तीव्रता (Fre-
quency) कहा जाता है।

ध्वनि-तरंगों के प्रति सेकेन्ड तीव्रता-चक्र में भी अन्तर पाया जाता
है। निम्न चित्र १४ में यह अन्तर स्पष्ट किया गया है।



चित्र १४

क की तीव्रता ४ चक्रों द्वारा व्यक्त की गई है। ख की तीव्रता उतने
ही समय में ६ चक्रों द्वारा व्यक्त हुई है।

आप ध्वनितरंग तथा प्रकाश-तरंग की तुलना कर सकते हैं। प्रकाश
तरंगों की माप लम्बाई की इकाई द्वारा होती है। ध्वनि तरंगों की माप
प्रति सेकेण्ड चक्र की तीव्रता द्वारा होती है। स्थान के ज्ञान के लिए दृष्टि
इन्द्रिय तथा समय के ज्ञान के लिए श्रवण इन्द्रिय प्रथम या मौलिक साधन
है। किसी एक स्थान से सम्बन्धित वस्तुएं एक साथ रहती हैं। दाएँ, बाएँ,

ऊपर, नीचे, दूर तथा नजदीक आदि स्थान के वर्ग (Categories) हैं। समय से सम्बंधित घटनाएँ एक दूसरे के बाद होती हैं। अब और तब पहले तथा पीछे, समय के वर्ग हैं। श्रवण इन्द्रिय स्थान के ज्ञान के लिए भी सहायक साधन है। जब हम कोई आवाज सुनते हैं तब हम उसका स्थानीकरण भी करते हैं। हम यह समझते हैं कि वह आवाज किस दिशा से आ रही है। इससे हमें आवाज उत्पन्न करनेवाली वस्तु के स्थान का ज्ञान प्राप्त होता है। हम यह समझते हैं कि यह आवाज दूर या नजदीक, दाएँ या बाए, ऊपर या नीचे से आ रही है। स्थान के ज्ञान का दूसरा मौलिक साधन स्पर्श-संवेदना है।

तीव्रता के अतिरिक्त ध्वनितरंग ऊँचाई में भी भिन्न होती है। यह भेद ध्वनि-उत्तेजक की तीव्रता पर निर्भर है। एक ही तीव्रता के ध्वनि तरंगों की ऊँचाई में अन्तर चित्र-१४ में दिखलाया गया है। 'घ' में ध्वनि-तरंगें 'ग' से अधिक ऊँचे हैं।

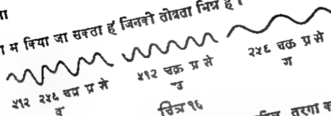
चित्र १४ में हम लोग विशुद्ध ध्वनितरंगों को देखते हैं। ये साइन तरंगें भी कहलाती हैं। इसमें सभी तरंगें एक समान हैं। इनकी आकृति नहीं बदलती है। 'ट्यूनिंग फार्क (Tuning Fork) के प्रकम्पन में 'साइन तरंगें' (Sign Waves) उत्पन्न होती हैं। ट्यूनिंग फार्क (Tuning Fork) बगल के चित्र १५ में दिखलाया गया है।


चित्र १५

जिन आवाजों को हम सुनते हैं उनकी उत्पत्ति ऐसे तरंगों से होती है जो विशुद्ध या सरल नहीं रहते हैं। ये जटिल रहते हैं और इनके आकार विभिन्न होते हैं। इनकी उत्पत्ति विभिन्न तीव्रता की तरंगों के सम्मिश्रण से होती है। एक जटिल ध्वनितरंग के आकार में निम्नलिखित प्रकार का क्रमिक परिवर्तन देखा जाता है।

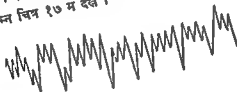
'क' के तरंगों का विश्लेषण 'ख' और 'ग' में व्यक्त दो प्रकार के

रगा म किया जा सकता हैं जिनकी तीव्रता भिन्न ह।



चित्र १६

ऊपर के चित्रा म व्यक्त किए गए सरल या जटिल तरगा का एक निश्चित आकार ह। जब इनम कोई परिवतन होता ह तब यह परिवतन भी एक निश्चित समय के साथ होता ह। अत यह सामयिक-तरगें (Periodic Waves) कहलाती ह। अनिश्चित आकार की भी ध्वनितरग हो सकता ह। ये असामयिक तरग (Aperiodic Waves) कहलाता ह। इन्हें आप निम्न चित्र १७ म दखें।



चित्र १७

हम लोगा ने दखा कि ध्वनितरगा म तीव्रता तथा ऊचाई रहती ह। वे विशुद्ध या मिश्रण, सामयिक या असामयिक हो सकती ह। श्रवण-उत्तेजक के विभिन्न गुण श्रवण-सवेदना की विभिन्न विशेषताओ स सम्बधित ह। सामयिक-तरगा (Periodic Waves) स ध्वनि (Tone) की उत्पत्ति होती ह। वाद्य यन्त्रा द्वारा उत्पन्न ध्वनितरगें 'सामयिक-तरगें' (Periodic Waves) ह। जब हम कोई सगीत सुनते हैं तब हम ध्वनि (Tone) सुनते ह। असामयिक तरग 'टाइपराइटर' (Typewriter) की खटखटाहट या किसी पत्थरीली जमीन पर बलगाडी के पहिए की घडघडाहट की भाँति शोरगुल उत्पन्न करती ह।

ध्वनितरगा की तीव्रता म अन्तर श्रवण सवेदना की कांति (Pitch)

से सम्बन्धित है। आप एक 'ट्यूनिंग फार्क' (Tuning Fork) से ऐसी ध्वनि उत्पन्न कर सकते हैं जो २५० चक्र प्रति सेकन्ड की गति से प्रकम्पित हो रही है। तथा दूसरे से एसी ध्वनि उत्पन्न कर सकते हैं जो ३०० चक्र प्रति सेकन्ड की गति से प्रकम्पित हो रही है। इन दोनों की ध्वनि में जो भेद आप सुनते हैं वह कोटि का भेद है। मनुष्य २० से २०,००० चक्र प्रति सेकन्ड तक की ध्वनि-तीव्रता सुन सकता है। कम तीव्र ध्वनि तरंग 'निम्नकोटि' (Low Pitch) तथा अधिक तीव्र ध्वनि तरंग 'उच्च कोटि' (High Pitch) उत्पन्न करते हैं।

घनत्व ध्वनितरंग की उस विशेषता से सम्बन्धित है जिसे हमने तरंग की ऊँचाई कहा है। ध्वनि तरंग जितनी ऊँची होगी उतनी ही जोरदार आवाज होगी। किन्तु समान तीव्रता का कम ऊँचा ध्वनि उत्तेजक अधिक ऊँचे ध्वनि उत्तेजक के समान प्रबल नहीं होगा। अतः ध्वनितरंग की तीव्रता में वृद्धि के साथ ध्वनि उत्तेजक के तीव्रता की अनुभव मात्र सीमा (R L) कम होती है। मनुष्य का कान ५१८ से २०४८ चक्र प्रति सेकन्ड तक की तीव्रता को अधिक ग्रहण कर सकता है इस श्रेणी के अन्तर्गत अत्यन्त निम्न तीव्रता के ध्वनि तरंग भी श्रवण-संवेदना उत्पन्न कर सकते हैं।

हमने पहले यह देखा कि ट्यूनिंग फार्क (Tuning Fork) विशुद्ध स्वर उत्पन्न करता है। वाद्य-यन्त्र जटिल स्वर उत्पन्न करते हैं। इन्हें विभिन्न तीव्रता की ध्वनितरंगों में बाँटा जा सकता है। निम्नतम तीव्रता की ध्वनि प्रधान ध्वनि (Fundamental Tone) कहलाती है। अन्य ध्वनि गौण ध्वनि (Over Toners) कहलाते हैं। प्रथम गौण ध्वनि की तीव्रता प्रधान ध्वनि की तीव्रता से दुगुनी है। द्वितीय गौण ध्वनि (Over Tone) की तीव्रता प्रधान ध्वनि से तिगुनी है इत्यादि।

विभिन्न वाद्ययन्त्रों के गौण ध्वनियों में अन्तर पाया जाता है। वे एक ही तरह के गौण ध्वनियाँ नहीं करते। गौण ध्वनियों की तीव्रता भी विभिन्न यन्त्रों में विभिन्न होती है। कुछ यन्त्रों में कोई विशेष गौण ध्वनि

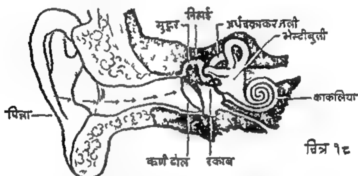
प्रधान रहती है तथा अन्य गौण ध्वनि क्षीण रहती है। विभिन्न वाद्ययन्त्रों द्वारा उत्पन्न संवेदना में अन्तर इन्हीं भिन्नताओं के कारण होता है। इनके सम्पूर्ण प्रभाव को नाद (Timbre) कहा जाता है। आप संगीत को सुनकर यह पता लगा सकते हैं कि कौन-कौन से वाद्ययन्त्र बजाए जा रहे हैं। यह भेद आप नाद (Timbre) के भेद के आधार पर समझते हैं। रेडियो सुनते समय आप यह समझते हैं कि बाँसुरी, वायलिन या सितारवादन हो रहा है। इनमें से प्रत्येक पर एक ही धुन बजाया जा रहा हो फिर भी इनमें अन्तर स्पष्ट रहता है।

कान की बनावट तथा क्रियाएँ (Structure and Function of the Ear)

मानव कान तीन भागों में बँटा है। बाह्य कान (Outer Ear) मध्य कान (Middle Ear) तथा अन्त कान (Inner Ear)। बाह्यकान के लटकते हुए भाग को पिन्ना (Pinna) कहा जाता है यह कर्णाञ्जलि (Auditary meatus) का बाहरी भाग है। पिन्ना कोई विशेष कार्य नहीं करता है। ध्वनि तरंगें कर्णाञ्जलि द्वारा कान में प्रवेश करती हैं। व कर्णढाल (Ear Drum) या टाम्पनिक मेम्ब्रेन (Tympanic membrane) से टकराती है। कर्णढाल बाह्यकान तथा मध्यकान के बीच में है। ध्वनि तरंगें कर्णढाल में प्रकम्पन उत्पन्न करती हैं।

मध्यकान में तीन हड्डियों की एक श्रृंखला है जिसे औसीकल्स (Osicles) कहा जाता है। प्रथम हड्डी को मुदगर (Hammer) दूसरी को निहाई (Anvil) तथा तीसरी को रकाब (Stirrup) कहा जाता है। इनका इस प्रकार नामकरण इनके आकार के अनुरूप किया गया है। मुदगर कर्णढाल के आन्तरिक भाग से सटा है। अतः कर्णढाल में प्रकम्पन होने से मुदगर में भी प्रकम्पन आरम्भ हो जाता है। रकाब अन्त कर्ण के एक छेद से सटा है जिसे अण्डाकार खिड़की (Oval Window) कहा जाता है। कान के विभिन्न भाग चित्र १८ में दिखलाए गए हैं —

अन्त कान, मध्यकान से अण्डाकार खिडकी तथा गोल खिडकी (Round Window) द्वारा सम्बन्धित है। दोनो पतली झिल्ली से ढकी है। अन्त कान म अर्द्ध चक्राकार नली (Semi Circular Canal) वेस्टीबुली (Vestibule) तथा काकलिया (Cochlea) है। श्रवण के लिए प्रथम दो की कोई उपयोगता नही है।



चित्र १८

काकलिया (Cochlea) म श्रवण-ग्राहक रहते है। इसका आकार घोघे की तरह चक्राकार है। इसम तीन सामानान्तर नली है। य झिल्लीदार परत द्वारा एक दूसरे से अलग रहती है। प्रत्येक नली में अन्तगत एक तरल पदार्थ रहता है जिसे अन्तर्लसिका (Endolymph) कहा जाता है। एक झिल्ली को बेसीलर मेम्ब्रेन (Bassiler Membrane) तथा दूसरे को भेस्टीबुलर मम्ब्रेन (Vestibuler Membrane) कहा जाता है। बेसीलर मेम्ब्रेन (Bassiler Membrane) पर कोर्टी इन्द्रिय (Organ of Corti) है। कोर्टी इन्द्रिय मे केश-पशिया (Hair cells) रहती है जो श्रवण के वास्तविक ग्राहक है।

निहाई के प्रकम्पन से अण्डाकार खिडकी (Oval Window) म अन्दर और बाहर की गति होती है। काकलिया क अन्दर के तरल पदार्थ म भी पाछे और आगे की गति होती है। इन गतियो म बेसीलर मेम्ब्रेन (Bassiler

Membrane) में तथा कोटा इन्द्रिय में गति उत्पन्न होती ह । मत इस प्रकार श्रवण ग्राहक उत्तेजित हो जात ह ।

स्नायु प्रवाह श्रवण स्नायुग्रा द्वारा प्रवाहित होती हं । श्रवण-स्नायु कान का सम्पक शख खण्ड में स्थित भानवाही चेत्र स स्थापित करते हं । ये स्नायु प्रवाह वृहत मस्तिष्कीय वल्क क केन्द्रा को उत्तेजित करत हं तथा श्रवण-सवन्ना होती ह ।

स्वाद सवेदना (Taste Sensation)

स्वाद सवदना क लिए उत्तेजक कोई भी रसायनिक पदार्थ ह । कोइ भी ठोस वस्तु बिना स्वाद सवदना का उत्पन्न नहीं करता ह । इस प्रकार की वस्तु से आपको स्पर्श या ताप का सवदना हो सकती है । स्वाद-ग्राहको (Taste Receptors) का स्वाद कलिका (Taste Buds) कहा जाता ह । य जिह्वा तथा गाल की रसाग्रा एव कण्ठ में स्थित ह । जब रसायनिक पदार्थ लार द्वारा मुँह म घुलते ह तब स्वाद-कलिकाएँ उत्तेजित होती हं ।

स्वाद के चार प्रधान गुण हैं—मीठा, खट्टा, तीता तथा नमकीन । स्वाद का अन्य विशेषताएँ अधिकत्तर घ्राण-सवदना क समिश्रण क कारण होती हं । सर्दी का दशा में हमें अनेक खाद्य-पदार्थों क स्वाद की सवदना नहीं होती ह । वास्तव म इन पदार्थों में हम उनक स्वाद क कारण अन्तर नहीं पात किन्तु यह अन्तर घ्राण-सवदना (Smell Sensation) द्वारा उनक गन्ध म भेद क कारण होता ह ।

यह समझा जाता ह कि मुख म चार प्रकार क प्रमुख स्वाद क अनुरूप चार प्रकार के स्वाद-ग्राहक हं । इसी कारण जिह्वा के सभी भाग सभी प्रकार क स्वाद-गुणा को एक समान ग्रहण नहीं करते । जिह्वा का अग्रिम भाग मीठापन, पृष्ठभाग तीतापन तथा किनारा का भाग खट्टापन ग्रहण करते हं । जिह्वा का समस्त भाग नमकीन स्वाद ग्रहण करता ह ।

अन्य सवदनाओं की भाँति स्वाद-सवदना भी अनुकूलन द्वारा लुप्त हो

जाती है। जो वस्तु पहले बहुत तीती मालूम होती है उसका तीतापन उसे लगातार खाते या पीते रहने से कम प्रतीत होता है। इसी तरह कोई अत्यन्त ही अधिक नमकीन वस्तु कुछ समय के बाद खाने योग्य प्रतीत होने लगता है। अनुकूलन (Adaptation) का प्रभाव दूसरे प्रकार से भी देखा जा सकता है। कुछ नमकीन खा लेने के बाद कोई भी मीठा पेय अधिक प्रतीत होता है।

गंध या घ्राण संवेदना (Smell Sensation)

घ्राण-संवेदना के उत्तेजक वाष्प तथा गैस हैं। ये हवा द्वारा नासिका छिद्र में प्रवेश कर नासिका छिद्र में स्थित घ्राण ग्राहकों (Smell Receptors) को उत्तेजित करते हैं। घ्राण के छः प्रमुख गुण हैं—व्यञ्जनी (Spicy) पुष्प सुरभि (Flowery) फल सुरभि (Fruity) दग्ध-गंध (Burnt), राल (Resinous) तथा परिदूषित गंध (Foul)। अन्य सभी प्रकार के गंध इन्हीं के मिश्रण हैं। हम स्वाद की अपेक्षा अधिकतर प्रकार के गंधों का अनुभव होता है। वास्तव में हम स्वाद के सूक्ष्म भेदों का ज्ञान गंध के आधार पर ही होता है। हम पहले भी बतला चुके हैं कि यदि घ्राण में अवरोध हो जाय तो स्वाद के गुण केवल कुछ ही प्रकार तक सीमित रह जायगे।

स्वाद-कलिका की भाँति घ्राणकन्द भी अनुकूलित हो जाते हैं। कुछ समय के पश्चात किसी प्रकार के दुर्गन्ध की तीव्रता कम प्रतीत होने लगती है। ऐसा ही अन्य प्रकार के गंधों के साथ भी होता है।

स्पर्श संवेदना (Touch Sensation)

त्वचा के खिंचाव और तनाव से जो परिवर्तन होता है वही स्पर्श का उत्तेजक है। स्पर्श के ग्राहक त्वचा में स्थित हैं। त्वचा के केशवाले भागों में तथा केशों के जड़ में जिसे केशकन्द कहा जाता है ये ग्राहक पाए जाते हैं। जिन भागों में केश नहीं रहते हैं वहाँ

मेसनर नामक सूक्ष्म अश (Mesner Corpuscles) स्पश-ग्राहक का काय करते ह ।

त्वचा क समस्त भाग में स्पश को सवेदना नही होता ह । इसमें कुछ ऐस बिन्दु (Spots) हैं जो शरीर में समान रूप स नहा विद्यमान हैं । स्पश-विन्दु (Touch Spots) शरीर क विभिन्न भागा में विभिन्न मात्रा म पाए जात ह । स्पश विन्दुग्रा की प्रति वग मीटर सख्या जिह्वा के अग्रिम भाग में तथा अंगुलिया के छार में सबस अधिक ह । स्पश बिन्दुग्रा की सख्या सबस कम पीठ में ह । इसा कारण एक ही समय त्वचा क दो स्थानो के उत्तेजित होने पर का निकटतम दूरी विभिन्न भागा में भिन्न भिन्न पाई जाता ह ।

किसा भाग म सबस कम दूरी जहाँ पर दो विन्दुग्रा के स्पश की अनुभूति हो सकती ह उस उस भाग का दा विन्दुग्रा का अनुभव मात्र सामान्त (Two point Threshold) कहा जाता ह । इस स्थान अनुभव मात्र सीमान्त (Spatial Threshold) भी कहा जाता ह । यह ऐसा इसलिए कहलाता ह क्याकि यह शरीर के विभिन्न भागा म दा बिन्दुग्रा के बीच के स्थान के प्रत्यक्षीकरण का एक माप प्रस्तुत करता ह । दो बिन्दु अनुभव मात्र सीमान्त (Two point Threshold) अनुभवमात्र सीमा (R L) है न कि सामान्त भेद (D L) का मान । यह त्वचा पर स्पश किए गए दो बिन्दुग्रा के निम्नतम दूरी की एक माप ह । यह किन्हीं दा मूल्या के भेद का माप नही ह ।

स्पश क गुणा का वर्गीकरण गुदगुदी, सम्पक तथा दबाव में किया गया ह । क्षाण उत्तेजक स गुदगुदा, मध्यम तीव्रता के उत्तेजक स सम्पक तथा अधिक तीव्र उत्तेजक स दबाव उत्पन्न होता ह ।

स्पश उत्तेजक के प्रति अनुकूलन भी शीघ्र हो जाता ह । लगातार उत्तेजना स सवेदना लुप्त हा जाती ह । जब कोई व्यक्ति पहले-पहल चश्मा लगाता ह तो उसे त्वचा के उन सभी भागा में स्पश की सवदना की अनु-भूति होती ह जिनका सम्पक चश्मे की फ्रेम से रहता ह । क्रमश यह

अनुभूति लुप्त हो जाती है। यदि आपको टोपी पहिनने की आदत है तो सिर के स्पर्श ग्राहकों के अनुकूलन के कारण टोपी पहिने रहने पर भी आपको यह पता नहीं चलता है कि आप टोपी पहिने हुए हैं।

पीड़ा संवेदना (Pain Sensation)

पीड़ा की उत्पत्ति किसी प्रकार के ऐसे उत्तेजक से होती है जिससे त्वचा के उन्मुक्त स्नायु की अन्तिम शिराओं (Free Nerve Endings) को आघात पहुँचता है। अधिक उत्तेजित किए जाने पर किसी भी ज्ञानेन्द्रिय में पीड़ा हो सकती है। उदाहरणार्थ अधिक जोर की आवाज से कान में पीड़ा होती है। अतः पीड़ा के लिए कोई विशिष्ट उत्तेजक नहीं है।

स्पर्श की भाँति त्वचा के सभी भागों में पीड़ा नहीं होती है। फिर भी पीड़ा बिन्दुओं की संख्या स्पर्श बिन्दुओं से अधिक है। यह अधिकतर छोरों (Extremities), जोड़ों (Joints) गर्दन तथा अन्य स्थानों में जहाँ दोष स्नायु तथा रक्त नालिकाएँ (Blood Vessels) त्वचा के सन्निकट रहती हैं। गाल के अन्दर की रेखाओं में पीड़ा नहीं होती है।

पीड़ा की विशेषताएं खुजलाहट चुभन तथा दर्द हैं। खुजलाहट क्षीण उत्तेजक से तथा चुभन और दर्द की उत्पत्ति तीव्र उत्तेजकों द्वारा होती है। समान तीव्रता के उत्तेजक द्वारा उत्तेजित होते रहने से पीड़ा में भी अनुकूलन हो जाता है। अधिक समय तक लगातार पीड़ा की अनुभूति तभी होती है जब पीड़ा के उत्तेजक की तीव्रता बीच बीच में परिवर्तित होती रहती है। समान तीव्रता के उत्तेजक से पीड़ा की संवेदना शीघ्र लुप्त हो जायगी। पीड़ा अनुकूलन का समय उत्तेजक के स्वरूप तथा शरीर के स्थान पर निर्भर करता है।

ठंढ तथा गर्म की संवेदनाएँ (Temperature Sensation)

ठंढ तथा गर्म की संवेदनाएँ ताप-संवेदना भी कहलाती हैं। त्वचा का ताप साधारणतः ३३°c रहता है। जिन उत्तेजकों का ताप ३२.५ c से

३३ ५ c तक रहता है उनमे ताप की सवेदना नहीं होती है। यह शारीरिक दृष्टिकोण से शून्य ताप के बराबर है। यह शारीरिक शून्य शरीर के अंगों के साथ बदलता रहता है। जिह्वा के नीचे का ताप ३७°c रहता है। कान में लगभग ३६ ५° तथा कर्णपालि (Ear Lobe) का ताप लगभग २६ रहता है। जब आप अपने कान को छूते हैं तो यह प्राय ठण्डा रहता है। यह ऐसा इसलिए प्रतीत होता है क्योंकि आपकी अँगुलियों का ताप ३३ ०°c है। अत यह स्पष्ट है कि ताप-सवेदना की उत्पत्ति शारीरिक ताप तथा उत्तेजक के ताप में अन्तर पर निर्भर करता है।

त्वचा पर ३३ ५ c ताप का कोई उत्तेजक गर्म मालूम होगा किन्तु ३२ ५°c से कम ताप का उत्तेजक ठंडा मालूम होगा।

अन्य त्वक्-सवेदनाओं की भाँति ठंड तथा गर्म बिन्दुएँ भी समस्त शरीर में विद्यमान हैं। जब किसी उत्तेजक का ताप ३३ ०°c से कम रहता है तब ठंड बिन्दुएँ क्रियाशील होती हैं तथा जब किसी उत्तेजक का ताप ३३°c से अधिक रहता है तब गर्म बिन्दुएँ उत्तेजित होती हैं। किन्तु ठंड बिन्दुएँ ४३ c से अधिक ताप द्वारा भी उत्तेजित होती हैं। यद्यपि उत्तेजक अधिक तापमान का रहता है फिर भी सवेदना ठंड की होती है। इसे विरोधभासी ठंड (Paradoxical Cold) कहा जाता है। अत ४३°c तापमान में गर्म नहीं मालूम होता है। इसमें ठंड तथा गर्म का सम्मिश्रण रहता है जिसका अनुभव ताप के रूप में होता है। ठंड बिन्दुएँ ठंडक की तथा गर्म बिन्दुएँ गर्म की सवेदनाएँ उत्पन्न करती हैं। ४३ c से अधिक तापमान द्वारा ठंड तथा गर्म बिन्दुओं के एक साथ उत्तेजित होने से ताप की सवेदना उत्पन्न होती है।

विरोधभासी ठंड की भाँति विरोधभासी गर्म (Paradoxical Hot) भी होता है। यह २५ c से ३१°c तापमान द्वारा गर्म बिन्दुओं के उत्तेजित होने से उत्पन्न होता है।

रक्त नालिकाएँ जो समस्त शरीर में पाई जाती हैं वे ताप ग्राहक का कार्य करती हैं। रक्त नालिकाओं की चिकनी माँसपेशियों की स्नायु

सिखाए ग्राहक हैं। चिकनी मांसपेशियाँ ठंड से सिकुड़ती हैं तथा गर्म से फैलती हैं। अधिक समय तक उत्तेजित होते रहने से ताप उत्तेजक के प्रति भी अनुकूलन हो जाता है। ताप अनुकूलन का प्रदर्शन ताप को धीरे धीरे घटा कर या बढ़ाकर किया जा सकता है। धीरे-धीरे ताप बढ़ाने या घटाने से किसी प्रकार के परिवर्तन का अनुभव नहीं होगा। जब ताप एकाएक अधिक बढ़ा या घटा दिया जाता है तब दर्द की संवेदना होती है।

ताप अनुकूलन से एक मनोरंजक भ्रम भी होता है। आप अपना एक हाथ गर्म पानी में तथा दूसरा ठंडे पानी में कुछ समय तक रख रहें। इसके बाद आप दोनों हाथों को त्वचा के ताप के बराबर तापमान के जल में रखें। यह जल एक हाथ में ठंडा तथा दूसरे में गर्म मालूम होगा।

ऊपर जिन विभिन्न संवेदनाओं का वर्णन किया गया है (स्पर्श, पीड़ा तथा ताप) वे त्वक्-संवेदनाएं भी कहलाती हैं। कुछ अन्य संवेदनाओं का वर्णन अब नीचे दिया जाता है —

गति संवेदना (Kinesthetic Sensation)

किसी अन्य वस्तु को देखते समय भी हम अपने शरीर की गति का बोध होता है। जब आप किसी अंधेरे कमरे में प्रवेश कर आगे बढ़ते हैं तब आप यह जानते हैं कि किस दिशा में कितनी तेजी से तथा किन स्थानों से आपके पैर आगे बढ़ रहे हैं। आप यह सभी इसलिए जानते हैं क्योंकि आपको शरीर की गति से संवेदनाएँ मिल रही हैं। ये संवेदनाएं गति द्वारा उत्पन्न हो रही हैं। ये संवेदनाएं गति-संवेदनाएँ कहलाती हैं।

गति-संवेदनाओं के ग्राहक मांसपेशियां, जोड़ तथा मांस रज्जुओं (Tendons) में जो मांसपेशियां तथा हड्डियों को मिलाती हैं स्थित हैं। ये ग्राहक 'प्रोप्रायासेप्टर्स' (Proprioceptors) कहलाते हैं। ये मांसपेशियां जोड़ तथा मांस रज्जुओं की गति से उत्तेजित होती हैं। जब हमारी मांसपेशियाँ, जोड़ें तथा मांस रज्जुएं गतिशील होती हैं तब गति ग्राहक उत्तेजित होते हैं। ज्ञानवाही प्रवाह उत्पन्न होकर पार्श्व खण्ड (Parietal Lobe)

के ज्ञानवाही क्षेत्र में पहुँचती है तथा हम लोगों को गति की संवेदना होती है। फिर प्रवाह क्रियावाही पथ में होकर मांसपेशियों जोड़ों तथा मांस रज्जुओं में पहुँचकर उनमें गति उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार गति की एक चक्राकार श्रृंखला आरम्भ हो जाता है। गति में क्रमबद्धता तथा अन्य गति आरम्भ होने का संकेत भी गति प्रवाहों के मस्तिष्क तक पहुँचने के फलस्वरूप होता है। प्रत्येक पैर की गति से उत्पन्न गति संवेदना के द्वारा ही दूसरा पाँव का क्रमश आगे बढ़ने की सम्पूर्ण व्यवस्था बनी रहती है। गति संवेदना प्रत्येक क्रिया की क्रमबद्धता का संकेत प्रस्तुत करती है। एक कुशल टाइप करने वाला व्यक्ति आँखों पर पट्टी लगाकर भी अच्छी तरह टाइप कर सकता है। वह ऐसा इस कारण करता है क्योंकि उसकी अंगुलियों की प्रत्येक गति उसे दूसरी गति आरम्भ करने का संकेत प्रदान करती है। प्रत्येक गति द्वारा उत्पन्न गति संवेदना उसे गति की दिशा स्थान तथा रफ्तार आदि प्रदान करती है।

गति संवेदनाओं द्वारा वजन उठाने का ज्ञान भी प्राप्त होता है। वजन की संवेदना शायन (Strain) तथा प्रयत्न की संवेदनाओं का सम्मिश्रण है। वजन उठाने में वजन के दबाव से शरीर के उस अंग की मांसपेशियों में जो वजन उठाती है अवरोध उत्पन्न होता है। इससे बोझ (Strain) की उत्पत्ति होती है। बोझ तथा प्रयत्न की संवेदनाएँ मांसपेशियों तथा मांस रज्जु के प्रान्तकों के उत्तेजित होने के कारण उत्पन्न होती हैं। गति संवेदना के गुण बोझ पीड़ा दबाव तथा तनाव हैं।

सन्तुलन (स्थिरता) संवेदना (Static Sensation)

शरीर अपना सन्तुलन स्वत कायम रखता है। सिर के आगे पीछे, दाँए बाँए तथा चक्राकार घुमाने में जो संवेदना अन्त कान में उत्पन्न होती है उसी कारण यह सन्तुलन कायम रहता है। हम लोगों ने पहले देखा कि अन्त कान में तीन भाग हैं—कोक्लिया वस्टीबुली तथा अर्द्ध चक्राकार नालिकाएँ (Cochlea Vestibuli and Semi-Circular Canals)। सन्तुलन में कोक्लिया क्रियाशील होता है। वस्टीबुली तथा अर्द्ध चक्राकार

नालिकाएँ शारीरिक सतुलन कायम रखती हं। कान के विभिन्न स्थानों में तीन अर्द्ध चक्राकार नालिकाएँ हं। प्रत्येक में एक प्रकार का तरल पदार्थ रहता है। कान के अन्तर्गत वेस्टीबुली पर केश के तरह की बनावट है जो तरल पदार्थ मे डूबी रहती है। जब आप अपनी मुद्रा बदलते हैं खड़ होते हं बठते हैं या टहलते ह तब सिर की गति होती है। इससे उन तरल पदार्थों म भी गति उत्पन्न होती है जो वेस्टीबुली के केशों को उत्तेजित करता है। केशो के उत्तेजित होने से ज्ञानवाही प्रवाह लघुमस्तिष्क तक पहुँच जाते ह। लघुमस्तिष्क म क्रियावाही प्रवाहें उत्पन्न होती हैं जो शरीर का सतुलन कायम रखती हैं। समुद्र यात्रा तथा वायु-यात्रा से उत्पन्न रोग (Sea Sickness and Air Sickness) म कान के अन्तर्गत सतुलन ग्राहकों में अधिक उत्तेजना होती ह जिसके परिणामस्वरूप चक्कर, वमन की इच्छा या मतली होती है।

अन्तरावयव सवेदनाएँ (Organic Sensation)

हमलोगों ने पहले देखा कि चिकनी मांसपेशियाँ शरीर के सभी आवश्यक अगों में हैं। ये अग अन्तरावयव मण्डल (Visceral System) कहलाते ह। स्वस्थ तथा सुखमय अनुभूति से सम्बन्धित सभी जटिल सवेदनाओं के ग्राहक इनमें पाए जाते हैं जिन्हें 'इन्टरासेप्टर्स (Introceptors) कहा जाता है। ये अन्तरावयव सवेदनाएँ कहलाती हं। भूख, प्यास, मतली, मल-मूत्र तथा पेट की अँतड़ियों म तनाव आदि अन्तरावयव की जटिल सवेदनाएँ हं।

४

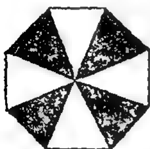
ध्यान (Attention)

किसी विशेष क्षण किसी व्यक्ति को वातावरण की उन वस्तुओं और व्यक्तियों का ज्ञान होता है जो उसके इर्द गिर्द रहते हैं और उसके प्रतिक्रिया को उत्तेजित करते हैं। उसे मस्तिष्क में आनेवाली वस्तुओं की प्रतिमाओं का, उसके अन्तर्गत होनेवाले विचारों तथा भावनाओं का, उसके शरीर के अन्तर्गत होनेवाली प्रक्रियाओं का तथा उन कार्यों का भी जिसे वह कर रहा है ज्ञान होता है। किन्तु इन सब का ज्ञान उसे बिलकुल स्पष्ट रूप से नहीं होता है। किसी एक क्षण उसे इस वस्तु या उस वस्तु का, इस प्रतिमा या उस प्रतिमा का, इस विचार या उस विचार या भाव का स्पष्ट ज्ञान होता है। इसका स्पष्ट ज्ञान इसलिए होता है क्योंकि वह इन पर ध्यान देता है। उस उस क्षण होनेवाले दूसरी अनुभूतियों का स्पष्ट ज्ञान नहीं होता है क्योंकि वह उन्हें ध्यान नहीं देता है। ध्यान व्यक्ति की उस आन्तरिक स्थिति का नाम है जिससे उसे किसी वस्तु या कार्य का स्पष्ट ज्ञान होता है। यह किसी दूसरे व्यक्ति का कार्य हो सकता है अथवा यह उसकी स्वयं मानसिक और शारीरिक क्रियाएं भी हो सकती हैं।

जिन उत्तेजकों या प्रतिक्रियाओं के प्रति ध्यान नहीं दिया जाता है उनसे वह उत्तेजक जिस पर ध्यान दिया जाता है पृथक हो जाता है। चित्र १० को देखने पर एक क्षण आपको एक काले क्रॉस (Cross) का ज्ञान होता है तथा दूसरे क्षण उजले क्रॉस (Cross) का।

पहले क्षण चित्र का काला भाग आपके ध्यान को आकर्षित करता है। उजले भाग से काला भाग पृथक हो जाता है। उजला भाग पृष्ठभूमि में चला जाता है। दूसरे क्षण उजला भाग स्पष्ट होता है और यह आपके ध्यान को आकर्षित करता है। काला भाग पृष्ठभूमि में चला जाता है।

एक क्षण आप उजले पृष्ठभूमि में उजले आकार को देखते हैं। आप जिस पर ध्यान देते हैं वही एक आकार के रूप में दिखाई देता है। किसी आकार की कुछ विशेषताएँ होती हैं। ये इसे उसके पृष्ठभूमि से पृथक कर देती हैं। देखनेवाले व्यक्ति को आकार पृष्ठभूमि से निकट मालूम होता है—यह आगे रहता है और पृष्ठभूमि पीछे। आकार की रेखाएँ स्पष्ट रहती हैं, पृष्ठभूमि की स्पष्ट नहीं रहती हैं। आकार की सभी चीजें विस्तृत एवं स्पष्ट रहती हैं पृष्ठभूमि की सभी चीजें अविस्तृत एवं अस्पष्ट



चित्र १८

रहती हैं। ध्यान का वर्णन उस प्रतिक्रिया के रूप में किया जा सकता है जिससे सम्पूर्ण उत्तेजक का एक भाग आकार की विशेषताओं को अपना लेता है।

ध्यान का वर्णन उस प्रक्रिया के रूप में भी किया जा सकता है जो कुछ उत्तेजकों को चेतना में केन्द्रित करता है। इसके फलस्वरूप वे उत्तेजक भिन्न एवं स्पष्ट प्रतीत होते हैं। जो उत्तेजक केन्द्रिभूत नहीं हो पाते हैं वे अभिन्न एवं अस्पष्ट रहते हैं। यह उसी तरह होता है जैसा टार्च की रोशनी जलने पर होता है। जो वस्तुएँ रोशनी की सीध में रहती हैं वे केन्द्र में आ जाती हैं और कोई भी व्यक्ति उन्हें बहुत ही स्पष्ट रूप से देखता है। जो वस्तुएँ रोशनी की सीध से बाहर रहती हैं वे केन्द्र के बाहर रह जाती हैं। या तो हम उन्हें नहीं देखते हैं या हमें अस्पष्ट दीखती हैं। जो उत्तेजक ध्यान के केन्द्र में रहते हैं उन पर हम केन्द्रित ध्यान देते हैं, अतः वे भिन्न और स्पष्ट दीखते हैं। जो उत्तेजक केन्द्र के बाहर रहते हैं उनपर हम पार्श्व ध्यान देते हैं अतः वे अभिन्न एवं अस्पष्ट होते हैं। एक ऐसी स्थिति भी हो सकती है जिस समय कोई उत्तेजक न तो हमारे ध्यान

केन्द्र म रहता ह और न पार्श्व ध्यान म । एस उत्तेजका का हमें ध्यान नही रहता ह । एक क्लास में किसी छात्र का ध्यान केन्द्र सडक पर के किसी सगीत की ग्रोर रह सकता ह । उसका पार्श्व ध्यान निकटवर्ती कमरे की शारगुल की ग्रार भी रह सकता ह । उसका ध्यान क्लास की पढाई की ग्रोर नही रह सकता ह । क्लास खत्म होने पर ग्राप उसस विभिन्न घटनाओं के बार म पूछ सकते ह । वह ग्रापको सगीत का स्पष्ट वर्णन देगा। वह उस राग का दोहरा भी सकता ह । वह ग्रापको यह भी बतला सकता ह कि उसने बगल के कमरे के शोरगुल को सुना किन्तु वह उसके स्वभाव के सम्बन्ध में अधिक नही बतला सकेगा । वह क्लास में पढाए गए पाठ के सम्बन्ध म तो कुछ भी नहीं बतलाएगा ।

ध्यान का वर्णन उत्तेजक के प्रति प्राणी की अभियोजन की क्रिया के रूप में भी किया जा सकता ह । जब कोई दूर के शोरगुल की ओर ध्यान देता ह तो उसके ग्रहण की श्रवण इन्द्रियाँ उस उत्तेजक को ग्रहण करने के लिए तत्पर हो जाती ह । जिस दिशा में शोरगुल होता ह उस दिशा की ओर उसे अपना सिर घुमाते आप देख सकते ह । ऐसा करने म उसके दोनो कान उत्तेजक को अच्छी तरह ग्रहण करते ह । आपने एक घोडे या किसी अन्य पशु को दूर के शोरगुल को सुनकर कान खडा करते हुए अवश्य देखा होगा । जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु को ध्यानपूर्वक देखता ह तो इसी प्रकार का अभियोजन उसकी दृष्टि ग्राहकों में देख जा सकते ह । अत ध्यान एक तयारी या तत्परता की स्थिति ह । जब कोई व्यक्ति ध्यान देता ह तो उसके ज्ञानेन्द्रिय उत्तेजक को ग्रहण करने के लिए विशेष रूप से तत्पर हो जाते ह ।

ध्यान में ग्राहकों के अभियोजन के अतिरिक्त प्रभावकों में भी अभियोजन होता ह । शरीर की मासपेशियाँ ध्यान की वस्तु की ओर कार्य करने के लिए या उन कार्यों म भाग लेने के लिए जो ध्यान के केन्द्र में रहते ह विशेषरूप से तत्पर रहती ह । ध्यान की अवस्था में कोई भी व्यक्ति मासपेशियों में तनाव देख सकता ह । आपने (N C C) एन० सी०

सी० का परेड तो अवश्य ही देखा होगा। जब तक उस्ताद सावधान नहीं बोलता है तब तक सभी छात्र आराम से खड़े रहते है पर ज्योंहि उसके मुख से सावधान शब्द निकलता है उनकी मुद्राएँ बदल जाती है और उनकी मासपेशियाँ कड़ी हो जाती है और तन जाती हैं। वही बात किसी दौड़ में भाग लेने वाले व्यक्तियों के साथ होती है। ज्योंहि तैयार होने की सूचना दी जाती है दौड़ में भाग लेने वाले लोग सावधान हो जाते हैं। उनकी मुद्राएँ बदलती है। वे आगे की ओर झुक जाते हैं। वे प्रारम्भ होनेवाले क्रिया की ओर विशेष रूप से ध्यान देते है। वे उसके लिए तैयार हो जाते है।

ध्यान में मानसिक तत्परता या सजगता भी होती है। जब आप किसी कार्य की ओर ध्यान देते है तो उस कार्य में सम्बन्धित मानसिक क्रियाएँ विशेष रूप से सजग हो जाती है। इस मानसिक तत्परता की उन्नति आप किसी व्यक्ति के कार्य करने की कुशलता में देखते हैं। यदि एक छात्र क्लास में शिक्षक को सुनते समय किसी पुस्तक के पन्नों को पढ़ते समय या हिसाब के प्रश्न को बनाते समय पूरा ध्यान नहीं देता है तो उन पढ़ाए गए पाठ का ज्ञान, या पुस्तक की बातों का सीखना या हिसाब के प्रश्न का समाधान निम्नकोटि का होता है। किन्तु जब वह ध्यानपूर्वक सुनता है पढ़ता है या हिसाब बनाता है तो इनके परिणाम अत्यन्त ही उत्तम होते है। ये अन्तर इसलिए होंगे क्योंकि ध्यान मानसिक प्रक्रियाओं को विशेष रूप से सजग बनाता है।

ध्यान के निर्धारक

हम लोगों ने ध्यान के स्वभाव को समझने की कोशिश की और देखा कि ध्यान की प्रक्रिया का वर्णन कई तरह से किया जा सकता है। अब हम उन तत्वों को समझने की कोशिश करते है जो किसी व्यक्ति में ध्यान की अवस्था उत्पन्न करते है। ये तत्व ध्यान निर्धारक अथवा ध्यान प्रतिबन्धक कहे जाते है। इनके द्वारा ध्यान का निर्धारण होता है। ये निर्धारक

बाह्य या वस्तुनिष्ठ हो सकते हैं। ये आन्तरिक या व्यक्तिगत भी हो सकते हैं। बाह्य निर्धारक के अन्तर्गत उत्तेजक की कुछ ऐसी विशेषताएँ रहती हैं जिनकी ओर ध्यान चला जाता है। उत्तेजक की तीव्रता एक ऐसी ही विशेषता है। एक कम तीव्र उत्तेजक की अपेक्षा अधिक तीव्र उत्तेजक की ओर ध्यान के अधिक आकर्षित होने की सम्भावना रहती है। हम लोगों का ध्यान जोर की ध्वनि तीव्र प्रकाश या तीव्र गन्ध की ओर आसानी से चला जाता है। आहिस्ता आवाज धीमी रोशनी या हल्के गन्ध की ओर हमारा ध्यान न भी जा सकता है।

उत्तेजक का आकार ध्यान का दूसरा बाह्य निर्धारक है। एक छोटे वस्तु की अपेक्षा वातावरण की बड़े वस्तु की ओर ध्यान के आकर्षण की अधिक सम्भावना है। उदाहरणार्थ जब आप रात में आकाश की ओर देखते हैं तो आपका ध्यान सबसे पहले पहल चन्द्रमा की ओर चला जाता है यद्यपि क्षितिज में अनेक तारे भी चमकते रहते हैं। आपके सम्मुख एक हाथी और एक बच्चा है। यदि आप बच्चे में विशेष दिलचस्पी नहीं रखते हैं तो हाथी की ओर आपके ध्यान के आकर्षित होने की अधिक सम्भावना है। उत्तेजक का सत्ताकाल भी ध्यान को प्रभावित करता है। कोई रोशनी या आवाज जो केवल कुछ ही क्षण के लिए होती है उसे ध्यान से बच जाने की अधिक सम्भावना है। किन्तु कोई रोशनी या आवाज जो कुछ समय के लिए स्थिर रहती है तो वह आपके ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करता है। फिर भी कोई रोशनी या आवाज जो समय-समय पर आती और जाती है उसकी अपेक्षा वह रोशनी या आवाज जो लगातार होता रहता है उस ओर ध्यान के आकर्षित होने की कम सम्भावना रहती है। यदि किसी स्थान पर बराबर हल्ला होता रहता है तो वह आपके ध्यान से बाहर चला जाता है किन्तु यदि हल्ला रुक-रुक कर होता है तो जब भी ऐसा होता है तब आपका ध्यान उस ओर चला जाता है।

स्थिर वस्तु की अपेक्षा गतिमान वस्तु की ओर आपका ध्यान जल्द जाता है। यदि आप एक मकान में काम कर रहे हैं तो वहाँ पर किसी

गतिविहीन सप की ओर आपका ध्यान न भी जा सकता है। पर ज्योंहि यह गतिमान हो जाता है आपका ध्यान जग जाता है।

एक तरह के उत्तेजक की अपेक्षा परिवर्तित और रंग विरंग उत्तेजक आसानी से ध्यान को आकर्षित करते हैं। साधारणतः आप अपने टेबुल पर की घड़ी की टिक टिक की ओर ध्यान नहीं देते हैं पर ज्योंहि यह आवाज बन्द हो जाती है आपका ध्यान उस ओर चला जाता है। इसी तरह एक रंग के छपे विज्ञापन की अपेक्षा विभिन्न रंगों के अक्षरों के छपे विज्ञापन की ओर ध्यान के अधिक आकर्षित होने की सम्भावना है। केवल रंगों में भेद की अपेक्षा विरोध का प्रभाव ध्यान पर अधिक होता है। उजले और लाल या हरे और पीले रंग के विज्ञापन की अपेक्षा काले और उजले या हरे और काले रंगों में छपे विज्ञापन की ओर ध्यान के अधिक आकर्षित होने की सम्भावना है। यदि एक बहुत ही लम्बा और एक बहुत ही बौना व्यक्ति साथ टहल रहे हैं तो आपका ध्यान उनकी ओर पहुंच जा सकता है न कि उस व्यक्ति की ओर जो एक दूसरे से केवल थोड़ा ही लम्बा है।

ध्यान के बाह्य निर्धारक सम्बन्धी बातों का उपयोग विज्ञापन निकालने में किया गया है। जब किसी वस्तु का विज्ञापित किया जाता है तो उस वस्तु के ग्राहकों का ध्यान उस वस्तु की ओर खींचने तथा कायम रखने के उद्देश्य से किया जाता है। एक अच्छा विज्ञापन को इस योग्य होना चाहिए। विज्ञापन निकालते समय उत्तेजक की सभी विशेषताएँ आकार सत्ताकाल गतिशीलता परिवर्तन आदि दृष्टि में रखे जाते हैं। एक अच्छा विज्ञापन बड़े अक्षरों में छपा होता है और समाचार-पत्रों तथा पत्रिकाओं में अधिक स्थान में दिया जाता है। बड़े शहरों में विज्ञापन के लिए बिजली की रोशनी का उपयोग होता है। किसी वस्तु का नाम और आकार पल-पल बिजली की रोशनी द्वारा दिखलाया जाता है। कुछ ऐसे विज्ञापनों में गति का उपयोग भी होता है। एक वस्तु दूसरे वस्तु के पीछे घूमते हुए दिखलाया जाता है। ये सभी उपाय इसलिए किए जाते हैं कि

व्यक्तियों का ध्यान विज्ञापित वस्तु की ओर खींचे और कुछ समय तक कायम रहे जिससे उन्हें उस वस्तु का ज्ञान हो सके।

ध्यान के आन्तरिक या व्यक्तिगत निर्धारक व्यक्ति की अभिरुचियाँ, प्रेरणाएँ इच्छाएँ आवश्यकताएँ तथा ध्येय हैं। वह वस्तु या कार्य जिन्हें व्यक्ति पसन्द करता है या जिनसे व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है उनकी ओर ध्यान के अधिक आकर्षित होने की सम्भावना है। कोई व्यक्ति एक प्रकार के फल को पसन्द कर सकता है या कोई किसी विशेष प्रकार के खेल में अभिरुचि रख सकता है। अन्य वस्तुओं की अपेक्षा उस फल या उस खेल में इस्तेमाल किए जानेवाली वस्तु की ओर उस व्यक्ति के ध्यान के अधिक आकर्षित होने की सम्भावना है। इसी प्रकार खाने की वस्तु की ओर तुरन्त भोजन किए हुए व्यक्ति की अपेक्षा भूखे व्यक्ति के ध्यान के अधिक आकर्षित होने की सम्भावना रहती है। यदि कोई व्यक्ति चिड़िया के शिकार के लिए निकलता है तो वृक्ष में लगे फल की अपेक्षा उन पर बैठे पक्षी की ओर उसके ध्यान के अधिक आकर्षित होने की सम्भावना रहती है। यदि कोई व्यक्ति जूता खरीदने के लिए जाता है तो कपड़े की दूकान की अपेक्षा जूते की दूकान की ओर उसका ध्यान अधिक आकर्षित होता है।

ध्यान के संबंध की कुछ बातें

ध्यान को अच्छी तरह समझने के लिए ध्यान के सम्बन्ध में कुछ अन्य विशेष बातों को भी जानना चाहिए। यदि आप अपना ध्यान दूर के किसी धीमी आवाज (घड़ी की टिक टिक) या किसी धीमी रोशनी की ओर लगाते हैं तो यह आवाज़ या रोशनी कभी प्रकट होती है और कभी लुप्त हो जाती है। एक क्षण यह आपके ध्यान में रहती है और दूसरे क्षण यह ध्यान से हट जाती है। इसे ध्यान विचलन (Fluctuation of Attention) कहा जाता है।

ध्यान विचलन से मिलती-जुलती पर वास्तव में इससे भिन्न ध्यान के सम्बन्ध में एक और भी दूसरी बात है। इसे ध्यान का हटना (Shift of Attention) कहा जाता है। पहले आपने एक चित्र देखा जिसका आकार बदलता रहता था। यहाँ पर उसी तरह का एक दूसरा चित्र है। यदि आप इसकी ओर कुछ समय के लिए देखते हैं तो आप अपने ध्यान को एक आकार से दूसरे आकार पर हटते हुए पाते हैं। आप अपने ध्यान में किसी एक आकार को अधिक समय तक नहीं रख सकते हैं।



चित्र २०

बच्चे का ध्यान बहुत ही चंचल होता है। वह एक वस्तु से हटकर दूसरे वस्तु पर चला जाता है। वह किसी एक वस्तु या कार्य पर एक क्षण से अधिक नहीं केन्द्रित रहता है। बच्चा किसी वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने में असमर्थ रहता है। प्रौढ़ व्यक्ति अपने ध्यान को एकाग्र कर सकते हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रौढ़ व्यक्तियों का ध्यान नहीं हटता है। प्रौढ़ व्यक्तियों का ध्यान भी एक वस्तु से सम्बन्धित दूसरे वस्तु की ओर चला जाता है। जब आप ताश के पत्तों को अपने हाथ में लेते हैं और खेल पर ध्यान केन्द्रित करते हैं तो आपका ध्यान एक ताश से दूसरे ताश पर जाता है। वह खेल से हटकर पास के चावल के मिल के हल्ले की ओर नहीं जायगा। वास्तव में जब खेल में अधिक ध्यान दिया जाता है तब हल्ला बिलकुल नहीं भी सुना जा सकता है। बच्चा किसी वस्तु पर एक क्षण से अधिक समय तक ध्यान कायम रखने से असमर्थ रहता है। जब ध्यान का हटना सम्बन्धित वस्तुओं या कार्यों तक सीमित रहता है तब इसे केन्द्रित (Absorbed or Concentrated) ध्यान कहा जाता है। असम्बन्धित वस्तुएँ और कार्य ध्यान में नहीं रहते हैं। जब असम्बन्धित उत्तेजक ध्यान आकर्षित करते हैं तब इसे विभाजित (Distracted) ध्यान कहा जाता है। बच्चों का ध्यान अधिक आसानी

से विभाजित होता है।

बच्चा के ध्यान केंद्रित करने के लिए शिक्षा की आवश्यकता होती है। उसे ऐसा करने के लिए आरम्भ में विशेष प्रयत्न करना होता है। जब किसी वस्तु या वस्तुओं पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रयत्न की आवश्यकता होती है तब वह प्रयत्नात्मक या ऐच्छिक ध्यान (Effortful-or Voluntary Attention) कहलाता है। छोटे बच्चों के शिक्षक इस बात को जानते हैं कि बच्चे को ध्यान केंद्रित करने की शिक्षा देना कितना कठिन है। वस्तु या कार्य में बच्चों की अभिरुचि उत्पन्न कर इस कठिनाई को दूर किया जा सकता है। शिक्षा की खेल विधि बच्चों को ध्यान केंद्रित करने की शिक्षा देती है क्योंकि बच्चे खेल की चीजों में अभिरुचि रखते हैं। रंगीन मूँग या शीशे की गोलियों का उपयोग बच्चों को अंक सिखलाने या गिनती सिखलाने में किया जाता है। धीरे धीरे बच्चा बिना प्रयत्न के उन कार्यों पर ध्यान देना सीख लेता है, उसमें ध्यान देने की आदत उत्पन्न होती है। एक बार जब बच्चा ध्यान केंद्रित करना सीख लेता है तब उसका ध्यान शीघ्र किसी असम्बन्धित वस्तु कार्य, प्रत्यय या प्रतिमा की ओर नहीं हटता है।

विशेष प्रकार के वस्तुओं और कार्यों के प्रति ध्यान स्वतः बिना प्रयत्न के अनैच्छिक (Involuntary) हो जाता है। यदि किसी धातु की अभिरुचि गणित बनाने में है तो वह इस कार्य पर बिना किसी विशेष प्रयत्न के आसानी से ध्यान केंद्रित कर सकता है। उसका ध्यान वातावरण के किसी दूसरे उत्तेजक या किसी असम्बन्धित प्रतिमा, प्रत्यय या विचार की ओर जल्द नहीं जायगा। वे आसानी से उस समय के कार्य से उसके ध्यान को नहीं विभाजित करेंगे।

ऐच्छिक या प्रयत्नपूर्ण ध्यान प्रौढ़ व्यक्तियों में भी देखा जाता है। जिस समय आप अपनी पाठ्य-पुस्तक पढ़ते रहते हैं उस समय यदि दो व्यक्ति आपके निकट बातें करने लगते हैं तो आपके ध्यान में बाधा होती है। आपको उनके बातचीत की ओर ध्यान नहीं देने के लिए विशेष रूप